ISBN:978-81-953839-7-9

वर्ष 2023-24
संस्थान का शताब्दी वर्षोत्सव

राजभाषा पत्रिका

हरीतिमा

श्री अन्न विशेषांक

भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
(आईएसओ 9001:2015 प्रमाणित संस्थान)
अल्मोड़ा-263 601, उत्तराखंड (भारत)
www.vpkas.icar.gov.in

वर्ष 2023–24

राजभाषा पत्रिका

हरीतिमा

श्री अन्न विशेषांक

भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

वर्ष 2023–24

विवरणिका

संकल्पना
डॉ. लक्ष्मी कान्त, निदेशक

संपादक मंडल
डॉ. कुशाग्रा जोशी
श्रीमती रेनू सनवाल
डॉ. प्रियंका खाती

संरक्षक एवं प्रकाशक
डॉ. लक्ष्मी कान्त
निदेशक, भाकृअनुप – विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा
फ़ोन : 05962–230208
ईमेल : director.vpkas@icar.gov.in
वेबसाइट : www.vpkas.icar.gov.in

आवरण चित्र
डॉ. महेन्द्र सिंह भिण्डा

अस्वीकरण
पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। विषय विशेष में अधिक जानकारी के लिए सम्बन्धित लेखक से सम्पर्क करें।

एम.एस. प्रिंटर्स, सी–108/1, बैक साइड, नारायणा औद्योगिक क्षेत्र, फेस–I, नई दिल्ली–110028, मो. 7838075335, दूरभाष: 011–45104606, ई–मेल: msprinter1991@gmail.com

कहाँ क्या पढ़ें

विवरण — पृष्ठ सं.

श्री अन्न से पोषण सुरक्षा

1. हिमालयी राज्यों में खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए लघु अन्न व अन्य पोषक फसलें — 3
   – शैलेज सूद
2. उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए रामदाने (चौलाई) की उन्नत उत्पादन तकनीकी — 10
   – दिनेश चन्द्र जोशी, राजेन्द्र प्रसाद मीणा एवं महेन्द्र सिंह भिण्डा
3. उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उगल की उन्नत उत्पादन तकनीकी — 14
   – दिनेश चन्द्र जोशी, राजेन्द्र प्रसाद मीणा एवं महेन्द्र सिंह भिण्डा
4. उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में कंगनी (फॉक्सटेल मिलेट) की उन्नत उत्पादन तकनीकी — 18
   – राजेन्द्र प्रसाद मीणा, दिनेश चन्द्र जोशी एवं महेन्द्र सिंह भिण्डा
5. कुपोषण एवं बदलते जलवायु परिवर्तन परिदृश्य में क्षमतावान फसल क्विनोआ की खेती — 21
   – महेन्द्र सिंह भिण्डा, दिनेश चन्द्र जोशी, रेनू सनवाल एवं लक्ष्मी कान्त
6. पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत श्री अन्न (कदन्न) फसलों की उन्नत उत्पादन तकनीकियां — 26
   – महेन्द्र सिंह भिण्डा, दिनेश चन्द्र जोशी, रेनू सनवाल एवं लक्ष्मी कान्त
7. श्रीअन्न (मंडुवा) की उन्नत प्रजाति का प्रदर्शन एवं प्रोन्नयनः एक कृषक सहभागी प्रयास — 35
   – रेनू जेठी, कुशाग्रा जोशी, प्रतिमा जोशी एवं रेनू सनवाल
8. श्री अन्न फसलों के हानिकारक कीट एवं उनका नियंत्रण — 37
   – अमित पश्चापुर, जयप्रकाश गुप्ता, सनाउल्लहा बट एवं नूतन कार्की
9. श्री अन्न फसलों के लिए विपणन की रणनीति — 42
   – कुशाग्रा जोशी, रेनू जेठी एवं मनीषा आर्या
10. मंडुवा एवं मादिरा के मूल्यवर्धित उत्पाद — 47
   – निधि सिंह, श्यामनाथ, महेन्द्र सिंह भिण्डा, रमेश सिंह पाल एवं दिनेश चन्द्र जोशी

विविध लेख

11. सूचना प्रौद्योगिकी का कृषि विकास में महत्व — 53
– कुशाग्रा जोशी एवं रेनू सनवाल

12. पर्वतीय क्षेत्रों में घर के आंगन में मुर्गीपालनः एक लाभप्रद सहव्यवसाय — 57
– नवल किशोर सिंह, हरीश चन्द्र जोशी एवं मेदनी प्रताप सिंह

13. पर्वतीय फल वृक्षों में परागण की समस्या एवं समाधान — 61
– कमल कुमार पाण्डे

14. कृषि उत्पादन में जैव उर्वरकों की महत्ता एवं उपयोग — 64
– मेदनी प्रताप सिंह, नवल किशोर सिंह एवं हरीश चन्द्र जोशी

15. रफ लेमन प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन — 68
– निधि सिंह

16. वीएल भट 201 एवं वीएल सोया 77ः पर्वतीय क्षेत्रों हेतु भट एवं सोयाबीन की पोषक तत्वों से भरपूर उन्नत प्रजातियां — 71
– अनुराधा भारतीय, रेनू सनवाल एवं हेमलता जोशी

17. फल तथा सब्जी प्रसंस्करण की तकनीकें — 74
– निधि सिंह एवं देवेन्द्र सिंह कार्की

18. नैनोटेक्नोलॉजीः स्मार्ट कृषि की ओर — 77
– प्रियंका खाती, पंकज कुमार मिश्रा, कुशाग्रा जोशी एवं रेनू सनवाल

19. कृषि रसायन का महत्व और उनका सुरक्षित उपयोग — 80
– तिलक मंडल, अमित कुमार एवं विजय सिंह मीणा

राजभाषा संबंधी गतिविधियां

20. संस्थान में राजभाषा सम्बन्धी गतिविधियाँ — 87

21. राजभाषा गतिविधियां — 94

22. कार्यालयी प्रयोग हेतु वाक्यांश — 100

निदेशक की कलम से

विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का लक्ष्य नई तकनीकियों, नवीनतम अनुसंधान और कृषि में नए उत्थान के माध्यम से किसानों के जीवन में सुधार करना है। हरीतिमा इस मिशन की आवश्यकता को समझाती है और इसके लिए समर्पित है। ये न केवल एक पत्रिका है, बल्कि यह एक साझेदारी है, जो सभी को मिलकर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। हमारी इस सफल यात्रा में हमारे साथी, पाठक, और योगदानकर्ताओं का पूरा सहयोग रहा है। चूँकि वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष घोषित किया गया था, जिस कारण इस पत्रिका में "श्री अन्न" के अधिकांश लेखों को शामिल करने का प्रयास किया गया है। "श्री अन्न" भारतीय कृषि एवं आहार परंपरा में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। प्रस्तुत अंक में श्री अन्न फसलों की उन्नत प्रजातियां, उन्नत उत्पादन तकनीकी, आहार में महत्त्व, विपणन के प्रभावी रणनीति जैसे विषय पर लेख सम्मिलित किये गए हैं। कार्यालयी कार्यो में तथा शोध के क्षेत्र में राजभाषा हिंदी की प्रगति के उद्देश्य से संस्थान ने कई प्रयास किये जिनका इस पत्रिका में वर्णन किया गया है। इसके अलावा इसमें कुछ अन्य लेख भी सम्मिलित किये गए हैं जो कृषकों एवं अन्य हितधारकों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे।

हरीतिमा के इस अंक में लेखकों द्वारा अपने लेख को सरल हिन्दी भाषा में प्रस्तुत किया गया है, जो बहुत ही सराहनीय कदम है। मैं अपनी तथा संस्थान की तरफ से विभिन्न लेखकों को बधाई देता हूँ कि उन्होंने अपने लेख हरीतिमा में प्रकाशित किए। साथ ही सम्पादक मंडल के सभी सदस्य भी पत्रिका के प्रकाशन हेतु बधाई के पात्र हैं।

पत्रिका के संबंध में आपके सुझावों की हमें प्रतीक्षा रहेगी।

जय किसान, जय विज्ञान, जय अनुसंधान।

(डॉ. लक्ष्मी कान्त)
निदेशक
भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि
अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा

सम्पादकीय

हिन्दी न केवल हमारे देश की पहचान है, अपितु यह हमारे संस्कारों, संस्कृति व मूल्यों की भी परिचायक है। हिन्दी जहाँ एक ओर सरल, सहज व सुगम भाषा है वहीं दूसरी ओर पूरे विश्व में इस भाषा को समझने, चाहने व बोलने वालो की संख्या अत्याधिक है। यहाँ यह कहना उचित होगा कि हिन्दी एक सर्वव्यापी भाषा है, जिसके अन्दर अनेक भाषाएं पनप रही हैं। हम देखते हैं कि हमारी क्षेत्रीय भाषाएं राजभाषा हिन्दी को सम्पन्न करती है और राजभाषा क्षेत्रीय भाषाओं को समृद्ध करती है। हिन्दी का शब्द भण्डार काफी विशाल है। हमारा कर्तव्य है कि विज्ञान एवं तकनीकी में भी हिन्दी को बढ़ावा दें तथा हिन्दी को ज्ञान–विज्ञान की भाषा के रूप में विकसित करें, ताकि विज्ञान, कृषि, पर्यावरण, चिकित्सा, आदि क्षेत्रों में भी लोग हिन्दी माध्यम से पढ़ाई कर सकें व समाज की उत्तरोत्तर उन्नति हो। फलस्वरूप युवा वर्ग भी हिन्दी से उत्साहपूर्वक जुड़ सकें।

संस्थान की हिन्दी पत्रिका हरीतिमा का यह अंक पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसमें भिन्न खंड हैं। प्रथम खंड में अन्तर्राष्ट्रीय श्री अन्न वर्ष 2023 के मध्येनजर श्री अन्न पर आधारित लेख दिये गये हैं। दूसरे खंड में अन्य कृषि व कृषि पूरक लेख दिये हैं तथा तृतीय खंड में संस्थान में हो रही हिन्दी सम्बन्धी गतिविधियों का उल्लेख है। हमें आशा ही नहीं, अपितु विश्वास है कि यह अंक पाठकों हेतु रूचिकर रहेगा। हम सभी लेखकों का हृदय से आभार व्यक्त करते है। पुस्तिका के प्रकाशन में अभूतपूर्व योगदान व मार्गदर्शन हेतु हम अपने निदेशक डॉ. लक्ष्मी कान्त का आभार प्रकट करते हैं, जो हमेशा से ही हिन्दी की उत्तरोत्तर उन्नति हेतु स्वयं प्रयासरत रहने के साथ ही संस्थान के कार्मिकों को भी इस दिशा में कार्य करने हेतु निर्देशित करते हैं। इस पुस्तिका के प्रकाशन में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग देने वाले सभी शुभचिंतकों का आभार एवं धन्यवाद। पुस्तिका को अधिक बेहतर बनाने हेतु पाठकों की प्रतिक्रियाओं का स्वागत है।

संपादक मंडल

श्री अन्न से पोषण सुरक्षा

हिमालयी राज्यों में खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए लघु अन्न व अन्य पोषक फसलें

शैलेज सूद
भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला, हिमाचल प्रदेश

सारांश

कल के मोटे अनाज आज की पोषक फसलें हैं। लघु अन्न व अन्य पोषक फसलें वर्षा आधारित कृषि के लिए महत्वपूर्ण और सबसे उपयुक्त फसलें हैं। भारत ने विशेष रूप से जलवायु परिवर्तन से प्रभावित क्षेत्रों में कदन्न की खेती को बढ़ावा देने के लिए वर्ष 2018 को 'मिलेट के राष्ट्रीय वर्ष' के रूप में मनाया। बाद में भारत के प्रस्ताव को संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) परिषद द्वारा भी मंजूरी दे दी गई, जिसके तहत वर्ष 2023 को 'अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष' के रूप में मनाने के लिए मंजूरी मिली ताकि मिलेट के बारे में वैश्विक जागरूकता बढ़ाई जा सके और इन पोषक अनाजों को भोजन और पोषण के लिए थाली में वापस लाया जा सके। पिछले 20 वर्षों में इन फसलों की उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई है। अधिकांश मिलेट और अन्य पोषक फसलें अत्यधिक पौष्टिक, ग्लूटेन रहित, अम्ल रहित और आसानी से पचने वाले खाद्य पदार्थ हैं। इन फसलों ने हाल ही में अपने उच्च पोषण मूल्य और जलवायु परिवर्तन मे अनुकूलता के कारण ध्यान आकर्षित किया। जलवायु परिवर्तन के संबंध में मिलेट्स और अन्य पोषक फसलों का प्रमुख रणनीतिक महत्व उनका अल्प अवधि फसल चक्र है। इन फसलों को अनुसंधान और विकास में उपेक्षित किया जाता है तथा इन्हें नीतिगत समर्थन नहीं मिलता है। इसलिए, इन लघु अन्न पोषक फसलों की सहायक नीतियों को विकसित करने, टिकाऊ कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देने और इन फसलों के लिए बाजार की माँग बढ़ाने के लिए सभी हितधारकों के सहयोग व प्रयास की आवश्यकता है।

हिमालयी राज्यों में खाद्य और पोषण सुरक्षा का महत्व

हिमालयी क्षेत्र कई समुदायों का घर है जो अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर हैं। हालांकि, इस क्षेत्र को ऊबड़–खाबड़ इलाके, अप्रत्याशित मौसम की स्थिति और मिट्टी की कम उर्वरता जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन चुनौतियों के कारण यहाँ पर कृषि उत्पादकता बहुत कम है और पौष्टिक खाद्य पदार्थों की कमी है, जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं और बच्चों में कुपोषण का उच्च स्तर देखा जाता है। इसके अलावा, हिमालयी क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है, जैसे कि विषम मौसम की घटनाएं और वर्षा के प्रतिरूप में बदलाव, जो इस क्षेत्र में खाद्य और पोषण संबंधी असुरक्षा को और बढ़ाते हैं। इसलिए, हिमालयी राज्यों में खाद्य और पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करना इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों की आजीविका में सुधार और सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण है। लघु अन्न पोषक फसलें विविध और पौष्टिक फसलों का एक स्थायी स्रोत प्रदान करके इस चुनौती से निपटने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

लघु अन्न पोषक फसलों को प्रायः अप्रयुक्त और उपेक्षित फसल माना जाता है। तथापि, वे हिमालयी राज्यों में खाद्य और पोषण संबंधी असुरक्षा को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। लघु अन्न, जैसे कि फिंगर मिलेट, फॉक्सटेल मिलेट, बार्नयार्ड मिलेट, प्रोसो मिलेट, लिटिल मिलेट और कोदो मिलेट, पोषण से भरपूर होते हैं और मुख्य फसलों की तुलना में फायदेमंद हैं। यह सूखा प्रतिरोधी हैं, इन फसलों को कम पानी की आवश्यकता होती है, और मिट्टी की उर्वरता के प्रति सहिष्णु हैं। इसके अतिरिक्त, यह फसलें लौह, जस्ता और कैल्शियम जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों में समृद्ध होती हैं, जिससे वे इस क्षेत्र के लोगों के लिए पोषण का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं। इसी तरह, क्विनोआ, और चौलाई जैसी संभावित फसलों ने हाल ही में अपने पोषण मूल्य और विभिन्न कृषि स्थितियों के लिए अनुकूलनशीलता के कारण लोकप्रियता हासिल की है। ये फसलें प्रोटीन, फाइबर और आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों में उच्च हैं व एक आदर्श खाद्य स्रोत हैं।

यह फसलें सदियों से हमारे आहार का एक अभिन्न अंग रही है। कई स्वास्थ्य लाभों के अलावा, कम पानी और अन्य इनपुट आवश्यकता के साथ पर्यावरण के लिए भी अच्छी है। जागरूकता पैदा करने और मिलेट के उत्पादन और खपत को बढ़ाने के लिए, संयुक्त राष्ट्र ने भारत सरकार की पहल पर 2023 को अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष घोषित किया। भारत कदन्न को लोकप्रिय बनाने में सबसे आगे रहने के लिए सम्मानित महसूस कर रहा है। कदन्न की खपत पोषण, खाद्य सुरक्षा और किसानों के कल्याण के लिए उत्तम फसलें है। इसलिए, लघु अन्न फसलों की खेती को बढ़ावा देने से आबादी की पोषण स्थिति में सुधार हो सकता है और इस क्षेत्र में कृषि की आर्थिक व्यवहार्यता में योगदान हो सकता है।

लघु अन्न

लघु अन्न छोटे बीज वाले अनाज का एक समूह है जो आमतौर पर परिपक्वता पर एक मीटर से कम लंबा होता है। इनमें कई प्रजातियां शामिल हैं जैसे कि फिंगर मिलेट (*एलुसिन कोराकाना*), फॉक्सटेल मिलेट (*सेटारिया इटालिका*), बार्नयार्ड मिलेट (*इचिनोक्लोआ फ्रुमेंटेसिया* और *ई. एस्कुलेंटा*), लिटल मिलेट (*पैनिकम सुमाट्रेंस*), प्रोसो मिलेट (*पैनिकम मिलियासेम*) और कोदो मिलेट (*पास्पलम स्क्रोबिकुलम*)। लघु अन्न पौष्टिक रूप से सम्पन्न हैं और मुख्य अनाज फसलों की तुलना में कई तरह से फायदेमंद हैं। लघु अन्न मानव स्वास्थ्य के लिए आवश्यक लौह, जस्ता और कैल्शियम जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों में भी समृद्ध होते हैं। वे आहार फाइबर और प्रोटीन में उच्च हैं, जो उन्हें एक पौष्टिक खाद्य स्रोत बनाते हैं जो विविध और पौष्टिक खाद्य पदार्थों की कमी वाले समुदायों में कुपोषण को दूर करने में मदद कर सकते हैं। इसके अलावा, लघु अन्न की फसल अवधि छोटी होती है। और वे इंटरक्रॉपिंग और मिश्रित फसल प्रणालियों के लिए अच्छी तरह से अनुकूल होते हैं, जिससे वे टिकाऊ कृषि प्रथाओं के लिए एक उत्कृष्ट विकल्प बन जाते हैं। वे कीट के लिए भी कम संवेदनशील हैं तथा लंबे समय तक खराब नहीं होते है।

तालिका 1. हिमालयी क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के लघु अन्न व अन्य पोषक फसलें

नाम (वर्नाकुलर नाम)	खेती वाले राज्य
लघु अन्न	
फिंगर मिलेट (मंडुवा, रागी)	कर्नाटक, तमिलनाडु, उत्तराखंड, महाराष्ट्र, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, सिक्किम, गुजरात
फॉक्सटेल मिलेट (कौनी, कांगनी)	कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश
प्रोसो मिलेट (चीना)	महाराष्ट्र, बिहार, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु
बार्नयार्ड मिलेट (सदिरा, सामा, झंगोरा)	उत्तराखंड, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, बिहार और पूर्वोत्तर राज्य
लिटिल मिलेट	मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, तमिलनाडु, झारखंड, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र और गुजरात
कोदो मिलेट	मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, तमिलनाडु और झारखंड
अन्य पोषक फसलें	
एमरैन्थ (चौलाई, चुआ, रामदाना)	उत्तर–पश्चिमी और उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र, उत्तरी मैदान, मध्य और दक्षिण भारत
बकव्हीट (कुट्टू, उगल, फाफर)	उत्तर–पश्चिमी और उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र
चिनोपोड्स	उत्तर–पश्चिमी और उत्तर–पूर्वी हिमालयी क्षेत्र

* एमरैन्थ की कई अन्य खेती वाली प्रजातियां हैं, लेकिन इन दोनों प्रजातियों की खेती मुख्य रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में की जाती है।

पर्वतीय क्षेत्रों में लघु अन्न व अन्य पोषक फसलों की खेती

जलवायु और मिट्टी की स्थिति मुख्य रूप से एक क्षेत्र के लिए खाद्य फसल की पसंद निर्धारित करती है। मनुष्यों ने लंबे समय तक प्रयोग किया और विभिन्न जलवायु और मिट्टी के लिए उपयुक्त फसलों की पहचान की। लघु अन्न फसलों को कम उत्पादकता और सूखा–प्रवण क्षेत्रों में खेती के लिए अत्यधिक उपयुक्त माना जाता है, विशेष रूप से मध्य–पर्वतीय क्षेत्रों में यह बहुत उपयुक्त है। इसी तरह, अन्य पोषक फसलों को मध्य और उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में खेती के लिए उपयुक्त पाया गया।

ऐतिहासिक काल से, हिमालयी क्षेत्रों में लघु अन्न व अन्य पोषक फसलों की खेती की गई है। हालांकि, सभी हिमालयी राज्यों में लघु अन्न क्षेत्र को या तो आलू, मक्का और धान द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है या बिना खेती के छोड़ दिया जाता है। मुख्य भोजन होने के अलावा, लघु अन्न मवेशियों को चारा प्रदान करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह चारा भूमि पर दबाव को कम करता है, इस प्रकार पारिस्थितिकी तंत्र में संतुलन बनाए रखता है।

लघु अन्न व अन्य पोषक फसलों का क्षेत्र, उत्पादन और उत्पादकता

भारत में, लघु अन्न की खेती मुख्य रूप से वर्षा आधारित फसलों के रूप में की जाती है और लगभग 1.6 मिलियन हैक्टेयर में की जाती है, जो देश में मोटे अनाज के तहत पूरे क्षेत्र का लगभग 10% है। भारत भर में सबसे लोकप्रिय लघु अन्न फिंगर मिलेट (रागी) है, जिसकी खेती लगभग 1.2 मिलियन हैक्टेयर में की जाती है, जिसका वार्षिक उत्पादन और उत्पादकता क्रमशः 2.0 मिलियन टन और 1,724 किग्रा./हैक्टेयर है। इसके विपरीत, अन्य लघु अन्न 0.44 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र में 0.35 मिलियन टन का उत्पादन और लगभग 781 किग्रा./हैक्टेयर की उत्पादकता देते है। 1950 के दशक के बाद से भारत में लघु अन्न की खेती के तहत क्षेत्र में काफी कमी आई है। हालांकि, क्षेत्र में कमी ने फिंगर मिलेट के समग्र उत्पादन को प्रभावित नहीं किया है,

लेकिन पिछले छह दशकों में अन्य लघु अन्न उत्पादन में पांच गुना कमी आई है (तालिका 2)। हिमालयी क्षेत्र में, लघु अन्न सभी राज्यों में उगाए जाते हैं, उत्तराखंड, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश में फिंगर मिलेट काफी क्षेत्र पर उगाया जाता है।

लघु अन्न की खेती में गिरावट के लिए कृषि संबंधी पहलुओं (उपयुक्त उन्नत किस्मों की कमी, बेहतर खेती प्रथाओं की कमी), सामाजिक आर्थिक पहलुओं (कम आर्थिक प्रतिस्पर्धा; अधिक आकर्षक और आधुनिक खाद्य व्यंजनों की कमी; छोटे उपयोगकर्ताओं के लिए विशिष्ट कटाई के बाद और प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों की कमी; घरेलू और बाजार दोनों स्तरों पर खराब क्षमता; खराब संगठित या अस्तित्वहीन मूल्य श्रृंखला; अपर्याप्त जागरूकता, इत्यादि कई कारणों को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

तालिका 2. भारत और उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में मंडुवा और अन्य लघु अन्न की खेती के आंकड़े

वर्ष	फिंगर मिलेट			अन्य लघु अन्न		
	क्षेत्रफल ('000है.)	उत्पादन ('000टन)	उत्पादकता (किग्रा/है.)	क्षेत्रफल ('000है.)	उत्पादन ('000टन)	उत्पादकता (किग्रा/है.)
1951–55	2275	1606	704	5290	2180	410
1971–75	2442	2227	909	4489	1745	388
1991–95	1936	2574	1333	1920	867	453
2006–10	1350	1976	1471	970	467	480
2012–13	1128.0	1574.4	1396	754.1	435.7	578
2016–17	1016.11	1385.11	1363	619.11	441.94	714
2017–18	1194.29	1985.24	1662	546.27	438.99	804
2018–19	890.94	1238.70	1390	453.75	333.00	734
2019–20	1004.46	1755.06	1747	458.35	370.81	809
2020–21	1159.40	1998.36	1724	444.05	346.95	781
एनडब्ल्यूएचआर* (2020–21)	89.58	130.34	1455	59.52	75.48	1268

*उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र (जे एंड के, एचपी और यूके);
स्रोत– आर्थिक और सांख्यिकी निदेशालय, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय 2023 (https://eands-dacnet.nic.in/)

फसल सुधार कार्यक्रम

लघु अन्न फसल सुधार कार्यक्रम का उद्देश्य उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रमुख बीमारियों के प्रति अंतर्निहित सहनशीलता रखने वाली नई उच्च उपज वाली किस्मों को विकसित करना है। चूंकि लघु अन्न पहाड़ियों में विविध परिस्थितियों में उगाए जाते हैं, इसलिए व्यापक अनुकूलन क्षमता के साथ किस्मों को विकसित करना सर्वोपरि है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, रोग प्रतिरोध के साथ–साथ उच्च अनाज उपज और चारे की उपज को संयोजित करने के लिए पुनर्संयोजन प्रजनन पर जोर दिया गया है। यद्यपि उनके बहुत छोटे फूलों के आकार के कारण लघु अन्न फसलों में पुनर्संयोजन प्रजनन मुश्किल है, फिर भी विविधता के विकास के इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप मडुआ, मादिरा और अन्य लघु अन्न फसलों में अच्छी संख्या में किस्में विकसित की गयी है। इन किस्मों को हिमालयी क्षेत्र और देश के अन्य हिस्सों में किसानों द्वारा बहुत अच्छी तरह से स्वीकार किया गया है।

हिमालयी क्षेत्र के लिए लघु अन्न फसलों की किस्में

वीएल मंडुवा 149, वीएल मंडुवा 315, वीएल मंडुवा 324, वीएल मंडुवा 347, वीएल मंडुवा 352, वीएल मंडुवा 376, वीएल मंडुवा 379 और वीएल मंडुवा 380 भूरे बीज वाली उच्च उपज (2500–3000 किग्रा./हैक्टेयर) वाली

मंडुवा की किस्में हैं। इनमे वीएल मंडुवा 315, वीएल मंडुवा 324, और वीएल मंडुवा 380 जैविक खेती के लिए उपयुक्त हैं। उत्तराखंड की पहाड़ियों में जैविक खेती के लिए एक सफेद बीज वाली किस्म वीएल मंडुवा 382 भी जारी की गई है।

उन्नत किस्म वीएल मंडुवा 379

वीएल मादिरा 172, वीएल मादिरा 207 और पीआरजे1 उत्तराखंड राज्य में खेती के लिए जारी की गई मादिरा की तीन उन्नत किस्में हैं और उनकी खेती को अन्य हिमालयी राज्यों में बढ़ाया जा सकता है। इन उन्नत किस्मों की औसत उपज 2000–2500 किग्रा./हैक्टेयर है। इन किस्मों से 4000 किग्रा./हैक्टेयर की उत्कृष्ट चारा उपज भी प्राप्त होती है।

पारंपरिक फसलों की तुलना में अन्य श्री अन्न पोषक फसलों के लाभ

श्री अन्न व अन्य पोषक फसलों के मुख्य अनाज फसलों की तुलना में कई लाभ हैं–

1. **सीमांत भूमि के लिए अनुकूलनशीलता:** श्री अन्न फसलें विभिन्न कृषि स्थितियों के अनुकूल हैं, जिनमें मिट्टी की कम उर्वरता, उच्च ऊंचाई और सूखा–प्रवण क्षेत्र शामिल हैं। वे सीमांत भूमि में पनप सकते हैं जहां मुख्य अनाज फसलें उगाना बहुत मुश्किल है।

2. **पोषण मूल्य:** श्री अन्न फसलें लौह, जस्ता और कैल्शियम जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं तथा रेशा और प्रोटीन में उच्च होती हैं। वे एक विविध और पौष्टिक खाद्य स्रोत प्रदान करती हैं जो विविध और पौष्टिक खाद्य पदार्थों की कमी वाले समुदायों में कुपोषण को दूर करने में मदद कर सकता है।

3. **जल दक्षता:** श्री अन्न फसलें सूखा प्रतिरोधी होती हैं और इन फसलों को मुख्य अनाज फसलों की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है। वे सीमित जल संसाधनों वाले क्षेत्रों के लिए एक आदर्श विकल्प हो सकती हैं, जो स्थायी कृषि प्रथाओं में योगदान करती हैं।

4. **कीट और रोग प्रतिरोध:** मुख्य अनाज फसलों की तुलना में श्री अन्न फसलें कीट और रोग हेतु कम संवेदनशील होती हैं। उन्हें कम रासायनिक आदानों की आवश्यकता होती है, जिससे कृषि के पर्यावरणीय प्रभाव को कम किया जा सकता है।

5. **श्री अन्न उगाने का मौसम:** श्री अन्न फसलों का फसल चक्र बहुत छोटा होता है, जो इंटरक्रॉपिंग और मिश्रित फसल प्रणालियों को बढ़ावा देता है तथा टिकाऊ कृषि प्रथाओं और जैव विविधता संरक्षण में योगदान देता है।

6. **आर्थिक व्यवहार्यता:** श्री अन्न फसलों की बाजार में मांग बढ़ रही है और यह फसलें कृषि की आर्थिक व्यवहार्यता में योगदान कर सकती हैं। ये मुख्य अनाज फसलों का विकल्प देती हैं, एक ही फसल पर निर्भरता को कम करती हैं और कृषि विविधीकरण को बढ़ावा देती हैं।

श्री अन्न फसलों के पोषण संबंधी लाभ

1. श्री अन्न फसलें उच्च न्यूट्रास्यूटिकल और एंटीऑक्सीडेंट गुणों के साथ अच्छे सूक्ष्म पोषक तत्व का स्रोत हैं। ये फसलें प्रोटीन, वसा, रेशा, लौह और अन्य खनिजों और विटामिन से भरपूर होती हैं। मंडुवा में लगभग 350 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम कैल्शियम होता है, प्रोसो, फॉक्सटेल और मादिरा प्रोटीन (11 से 12.5%) से समृद्ध हैं; फॉक्सटेल और अन्य श्री अन्न वसा (4.0 से 5.2%) से समृद्ध हैं, लिटिल और फॉक्सटेल मिलेट फाइबर

(6.7 से 13.6%) से समृद्ध हैं। धान, गेहूँ और ज्वार जैसे अन्य प्रमुख अनाजों की तुलना में लिटिल मिलेट और मादिरा लौह (9.3 से 18.6 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम) से समृद्ध हैं। श्री अन्न का उपयोग मल्टीग्रेन और ग्लूटन मुक्त अनाज उत्पादों और विभिन्न पारंपरिक खाद्य पदार्थों और पेय पदार्थों, जैसे रोटी, दलिया और स्नैक के लिए एक प्रमुख खाद्य घटक के रूप में उपयोग होता है।

2. श्री अन्न फसलें आहार फाइबर में उच्च होती हैं, स्वस्थ पाचन को बढ़ावा देती हैं और मधुमेह और हृदय रोग जैसी बीमारियों के जोखिम को कम करती हैं।

3. श्री अन्न और संभावित फसलें प्रोटीन में उच्च होती हैं, जिससे वे शाकाहारियों और पशु प्रोटीन तक सीमित पहुंच वाली आबादी के लिए पोषण का एक उत्कृष्ट स्रोत बन जाती हैं।

4. कुछ श्री अन्न और संभावित फसलें, जैसे क्विनोआ और उगल ग्लूटन मुक्त होते हैं, जिससे उन्हें ग्लूटन असहिष्णुता या सीलिएक रोग वाले लोगों के लिए एक उत्कृष्ट विकल्प माना जाता है।

5. श्री अन्न फसलों में ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है, जिससे इंसुलिन प्रतिरोध और मधुमेह का खतरा कम हो जाता है।

तालिका 3 स्पष्ट रूप से दिखाती है कि श्री अन्न व अन्य पोषक फसलें कई पोषण संबंधी लाभ प्रदान करती हैं, जिससे वे विविध और पौष्टिक खाद्य पदार्थों तक सीमित पहुंच के साथ आबादी के लिए पोषण का एक उत्कृष्ट स्रोत बन जाते हैं। वे सूक्ष्म पोषक तत्वों, आहार फाइबर और प्रोटीन में समृद्ध हैं, जो आबादी के समग्र स्वास्थ्य और कल्याण में योगदान करती हैं।

कदन्न की खेती और खपत में सुधार के प्रमुख कारक

हिमालयी राज्यों में श्री अन्न फसलों को बढ़ावा देने के लिए कई कारकों की पहचान की गयी है, जो इस प्रकार है–

- **सहायक नीति वातावरणः** सहायक नीतियों और संस्थागत ढांचे का विकास करना, जो श्री अन्न फसलों की खेती, प्रसंस्करण और विपणन को बढ़ावा देता है, मुख्यधारा की कृषि में उन्हें अपनाने और एकीकरण के लिए महत्वपूर्ण है। ये नीतियां किसानों को अनुदान, ऋण सुविधाएं और प्रसार सेवाएं प्रदान करती हैं, जिससे उन्हें अपनाने और बाजार में मांग बढ़ने में सहायता मिलती है।
- **अनुसंधान और विकास में निवेशः** श्री अन्न फसलों में अनुसंधान और विकास में निवेश उनकी क्षमता को बढ़ा सकता है और इन फसलों के लिए मूल्य श्रृंखला विकसित कर सकता है। इसमें नई किस्में, बीज प्रणालियां और मूल्य वर्धित उत्पाद विकसित करना शामिल है, जो बाजार की मांग को बढ़ा सकते हैं और किसानों के लिए आय उत्पन्न कर सकते हैं।
- **किसानों का क्षमता निर्माणः** किसानों को क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करना, जो कृषि प्रणालियों में श्री अन्न फसलों को अपनाने और एकीकरण का समर्थन करते हैं, उनकी सफलता के लिए महत्वपूर्ण है। इसमें फसल प्रबंधन, बीज उत्पादन और विपणन में प्रशिक्षण शामिल है।
- **बाजार संपर्कः** श्री अन्न फसलों के लिए बाजार लिंकेज और मूल्य श्रृंखला विकसित करना उन्हें अपनाने और मुख्यधारा की कृषि में एकीकरण के लिए महत्वपूर्ण है। इसमें प्रसंस्करण इकाइयों, भंडारण सुविधाओं और विपणन चैनलों को विकसित करना शामिल है जो बाजार की मांग को बढ़ा सकते हैं और किसानों के लिए आय उत्पन्न कर सकते हैं।
- **सार्वजनिक–निजी भागीदारीः** सरकार, निजी क्षेत्र और नागरिक समाज संगठनों के बीच सहयोग मुख्यधारा की कृषि में श्री अन्न फसलों को अपनाने और एकीकरण को बढ़ा सकता है। इसमें बीज कंपनियों, प्रसंस्करण इकाइयों और किसान समूहों के बीच साझेदारी शामिल हो सकती है जो इन फसलों की खेती, प्रसंस्करण और विपणन को बढ़ावा देती हैं।

कुल मिलाकर, हिमालयी राज्यों में श्री अन्न फसल संवर्धन की सफलता के लिए सहायक नीतियों और संस्थागत ढांचे, अनुसंधान और विकास में निवेश, किसानों के क्षमता निर्माण, बाजार सम्पर्क और सार्वजनिक–निजी भागीदारी के विकास की आवश्यकता है। ये कारक मुख्यधारा की कृषि में श्री अन्न फसलों को अपनाने और एकीकृत करने, टिकाऊ कृषि प्रथाओं में योगदान देने और क्षेत्रीय खाद्य और पोषण सुरक्षा में सुधार करने को बढ़ावा देते हैं।

कुल मिलाकर, श्री अन्न फसलों को बढ़ावा देने और अपनाने के लिए सभी हितधारकों से सहयोगी प्रयासों की आवश्यकता है। नीति निर्माताओं, किसानों और उपभोक्ताओं को सहायक नीतियों को विकसित करने, टिकाऊ कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देने और इन फसलों के लिए बाजार की मांग बढ़ाने के लिए मिलकर काम करना चाहिए। यह प्रयास हिमालयी क्षेत्रों में कृषि की आर्थिक व्यवहार्यता में योगदान कर सकता है, खाद्य और पोषण सुरक्षा में सुधार ला सकता है, और सतत विकास को बढ़ावा दे सकता है।

तालिका 3. प्रमुख अनाजों की तुलना में लघु अन्न व अन्य पोषक फसलों की पोषण संरचना (प्रति 12% नमी; प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग)

फसल	प्रोटीन (ग्रा.)	वसा (ग्रा.)	क्रूड फाइबर	कार्बोहाइड्रेट (ग्रा.)	उर्जा (किलो कैलेरी)	कैल्शियम (मिग्रा.)	लौह (मिग्रा.)	थाइमिन (मिग्रा.)	रिबोफ्लेविन (मिग्रा.)	नियासिन (मिग्रा.)
फिंगर मिलेट	7.7	1.5	3.6	72.6	336	350	3.9	0.42	0.19	1.1
फॉक्सटेल मिलेट	11.2	4.0	6.7	63.2	351	31	2.8	0.59	0.11	3.2
प्रोसो मिलेट	12.5	3.5	5.2	63.8	354	8	2.9	0.41	0.28	4.5
लिटिल मिलेट	9.7	5.2	7.6	60.9	329	17	9.3	0.3	0.09	3.2
बार्नयार्ड मिलेट	11.0	3.9	13.6	55.0	300	22	18.6	0.33	0.10	4.2
कोदो मिलेट	9.8	3.6	5.2	66.6	353	35	1.7	0.15	0.09	2.0
पर्ल मिलेट	11.8	4.8	2.3	67.0	363	42	11.0	0.38	0.21	2.8
कुट्टू/उगल	13.5	7.4	10.3	72.9	335	114	13.2	–	–	–
ऐमरैन्थ	15.3	7.1	–	63.1	391	153	17.5	–	–	–
चेनोपोड्स	16.0	–	–	–	395	149	6.5	–	–	–
चावल (भूरा)	7.9	2.7	1.0	76.0	362	33	1.8	0.41	0.04	4.3
गेहूँ	11.6	2.0	2.0	71.0	348	30	3.5	0.41	0.1	5.1
मक्का	9.2	4.6	2.8	73.0	358	26	2.7	0.38	0.2	3.6
चारा	10.4	3.1	2.0	70.7	329	25	5.4	0.38	0.15	4.3

स्रोतः गोपालन और अन्य, 1999; सिंह और सूद, 2022

देवनागरी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से अत्यन्त वैज्ञानिक लिपि है।

– रविशंकर शुक्ल

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए रामदाने (चौलाई) की उन्नत उत्पादन तकनीकी

दिनेश चन्द्र जोशी, राजेन्द्र प्रसाद मीणा एवं महेन्द्र सिंह भिण्डा
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

रामदाना अर्थात चौलाई बथुआ कुल (चिनोपोडेसी) का एक कूट धान्य है, जो मनुष्य के लिए आवश्यक पोषक तत्वों के रुप में अत्यन्त गुणकारी है। इसके पत्ते से लेकर तना, फूल और दाना उपयोग में लाये जाते हैं। इसका बीज पीला, सफेद, खसखस जैसा दिखता हैं। रामदाने की खेती सब्जी और दानों के लिए की जाती है। इसके लाभों से भिज्ञ होकर इसका नाम रामदाना (भगवान का दाना) और राजगीरा (शाही अनाज) रखा गया, जिसे अंग्रेजी में ऐमरैंथ कहते हैं। ऐमरैंथ शब्द की उत्पत्ति संस्कृत से हुई मानी जाती है जिसका अर्थ मृत्यु की संभावना को कम करना है। पौष्टिकता से परिपूर्ण होने के कारण इसको उपवास के दिनों मे खाया जाता है।

हमारे पारंपरिक भोजन में विविध अनाज, जैसे ज्वार, बाजरा, रागी, कोदो, जौं, गेहूँ, मक्का तथा दालों में अरहर, मूँग, उड़द, लोबिया, मसूर, चना, आदि सम्मिलित हुआ करते थे जिससे हमारे शरीर को संतुलित मात्रा में पोषक तत्व प्राप्त होते रहते थे। फलस्वरूप हमारे पूर्वज ऊर्जावान, स्वस्थ एवं दीर्घजीवी हुआ करते थे। हरितक्रांति के फलस्वरूप गेहूँ और धान फसल चक्र को प्रसिद्धि मिली जिसके चलते गेहूँ, चावल और दाल हमारे भोजन का अहम् हिस्सा बन गए तथा मोटे और पोषक अनाज आम आदमी की थाली से गायब ही हो गए। इस बदलाव का नुकसान देश की बहुत बड़ी आबादी को खाद्य असुरक्षा और कुपोषण के रूप में भुगतना पड़ा। अभी हाल ही में हमारे देश में खाद्य सुरक्षा कानून लागू किया गया है। सही मायने में देश में खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ पोषण सुरक्षा की भी आवश्यकता है। इसके लिए सीमित लागत में कठिन वातावरण में भी अधिकतम उत्पादन देने वाली अल्पप्रयुक्त फसलों की खेती को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। ऐसी ही सर्वगुणिय आदर्श फसल है रामदाना, जिसे दाना या आटा, दोनों

रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके दानों को फुलाकर इससे अनेक प्रकार के स्वादिष्ट व पौष्टिक खाद्य पदार्थ जैसे– लड्डू, चिक्की, हलवा, आदि तैयार किये जाते हैं। अमेरिका में राजगीरा से विविध बेकरी पदार्थ यथा ब्रेड, बिस्कुट, पास्ता, पेस्ट्री, केक, आदि तैयार किये जाते है। इसमें गेहूँ, चावल की अपेक्षा प्रोटीन की मात्रा अधिक पायी जाती है। चौलाई के दानों में पाई जाने वाली आवश्यक अमीनों अम्ल व लाइसीन की मात्रा अन्य खाद्यान्न की तुलना में ज्यादा होती है। शाकाहारी लोगों के लिए चौलाई एक विशेष खाद्य स्रोत है, जिसकी गुणवत्ता मछली में उपलब्ध प्रोटीन के बराबर मानी जाती है। गेहूँ की तुलना में चौलाई के दानों में 10 गुना से अधिक कैल्शियम, चार गुना से अधिक वसा, दो गुना रेशा व तीन गुना से अधिक लौह तत्व पाया जाता है। इसके अलावा मानव को स्वस्थ व ऊर्जावान रखने वाले आवश्यक पोषक तत्व इस नन्हें से बीज में विद्यमान हैं तभी तो इसके 100 ग्राम दानों का सेवन करने से 410 किलो कैलौरी हमें प्राप्त होती है जो कि अन्य अनाजों से काफी अधिक है (तालिका–1)।

तालिका 1: गेहूँ एवं चावल की तुलना में रामदाने के पोषक तत्व

पोषक तत्व	रामदाना	गेहूँ	चावल
प्रोटीन (ग्राम)	15.6	8.5	6.8
वसा (ग्राम)	6.3	1.5	0.5
खनिज लवण (ग्राम)	2.9	1.5	0.7
कैल्शियम (मिग्रा.)	222	41	10
लौह (मिग्रा.)	13.9	3.5	1.8
ऊर्जा (किलो कैलोरी)	410	346	345

रामदाना की प्रजातियाँ

चौलाई, रामदाना या राजगीरा के नाम से प्रसिद्ध अमरन्थेसी कुल का यह पौधा सीधा बढ़ता है जिसकी पत्तियाँ चौड़ी व बालियाँ भूरी अथवा लाल रंग की होती हैं। इसकी चार प्रजातियाँ *अमरेन्थस हाईपकान्ड्रएकस, अमरेन्थस कारडेन्टस, अमरेन्थस एड्यूलिस, अमरेन्थस करुन्टस* दानों के लिए लगाई जाती हैं। सब्जी के लिए मुख्यतः *अमरेन्थस ड्रूबियस, अमरेन्थस वलीटन, अमरेन्थस विरीडीस, अमरेन्थस ट्राइकलर* का उपयोग किया जाता है, जबकि *अमरेन्थस हाइब्रिड* नामक प्रजाति सब्जी व चारे के लिए लगाई जाती है।

रामदाना उत्पादन की तकनीक

विश्व के अनेक देशों में चौलाई–रामदाना की खेती प्रचलित है। भारत में इसकी खेती जम्मू कश्मीर से लेकर दक्षिण व उत्तर पूर्वी भारत में अल्प प्रयुक्त फसल के रूप में की जाती है। देश के पर्वतीय क्षेत्रों में रामदाना एक नकदी फसल के रूप में उगाई जाती है तथा पहाड़ियों के भोजन का अहम हिस्सा है। रामदाने की खेती गैर उपजाऊ, कंकरीली–पथरीली भूमियों तथा कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है।

भूमि का चयन एवं खेत की तैयारी

रामदाने की खेती अमूमन सभी प्रकार की भूमियों में की जा सकती है परन्तु अच्छी उपज के लिए जल निकास युक्त बलुई दोमट मिट्टी उत्तम रहती है। पौध बढ़वार और विकास के लिए मृदा का पीएच मान 6 से 8 के मध्य अच्छा माना जाता है। रामदाने का बीज बहुत छोटा होता है। अतः खेत की अच्छी प्रकार जुताई कर मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए जिससे बीजों का मृदा से संपर्क अच्छी प्रकार से हो सके। इसके लिए खेत में 2–3 बार जुताई कर पाटा लगाऐं व खेत को समतल कर लें।

उन्नत किस्मों का चुनाव

अखिल भारतीय अल्प प्रयुक्त फसल अनुसंधान परियोजना द्वारा रामदाने की अनेक उन्नत किस्में विकसित

की गई हैं। उपयुक्त रामदाना की किस्मों का विवरण तालिका–2 में प्रस्तुत हैं।

तालिका 2: रामदाना की उन्नत किस्में

प्रजाति का नाम	फूल आने का समय (दिनों में)	पकने की अवधि (दिनों में)	पौधों की ऊँचाई (से.मी.)	उपज क्षमता (किग्रा./है.)	किग्रा./नाली
अन्नपूर्णा	71	132	138	1600–1800	32–36
पी.आर.ए. 1	65	125	150	1800–2000	36–40
पी.आर.ए. 2	70	130	140	2000–2200	40–44
पी.आर.ए. 3	70	130	135	2200–2500	44–50
वीएल चुआ 44	55	100	135	2000–2200	40–44
दुर्गा (आई.सी. 35407)	60	110	135	2200–2500	44–50

बीज और बुवाई

बीज की मात्रा बुवाई की विधि पर निर्भर करती है। छिड़कवा विधि से बुवाई करने पर 2 किग्रा. तथा कतार विधि से बुवाई करने पर 1.2 से 1.5 किग्रा. प्रति हैक्टयर बीज पर्याप्त रहता है। प्रायः किसान छिटकवा विधि से बुवाई करते हैं क्योंकि इससे कम मेहनत में सुगमता से बुवाई की जा सकती है परन्तु अधिकतम उपज के लिए बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिए। कतार विधि से बुवाई करने से सस्य क्रियाओं में आसानी होती है। साथ ही उचित संख्या और समुचित बढ़वार होने से उपज अधिक प्राप्त होती है। कतार से कतार 45 सेमी. तथा पौध से पौध के मध्य 15 सेमी. की दूरी रखना उत्तम रहता है। बीज को 2 सेमी. की गहराई पर बोना चाहिए। ध्यान रखें कि बुवाई करते समय खेत में पर्याप्त नमी रहे, अन्यथा अंकुरण प्रभावित हो सकता है। आसानी से बुवाई करने के लिए बीज को रेत के साथ मिलाकर (1:4) बोया जाना अच्छा रहता है।

खाद एवं उर्वरक

रामदाने की फसल प्रायः कम उपजाऊ एवं सीमांत भूमियों में की जाती है। खाद एवं उर्वरकों का इस्तेमाल लेशमात्र किया जाता है जिससे किसानों को कम उपज प्राप्त होती है। सामान्य भूमियों में 5–6 टन गोबर की खाद को खेत में एक समान बिखेर कर जुताई कर देना चाहिए। इसके अलावा बुवाई के समय 60 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फॉस्फोरस और 20 किग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से कतार में देना लाभप्रद पाया गया है।

सिंचाई एवं खरपतवार नियंत्रण

खरीफ में बोई गई रामदाने की फसल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। रबी एवं जायद में बोई जाने वाली फसल में 3–4 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। फूल और दाना बनते समय खेत में पर्याप्त नमी रहने से उपज में बढ़ोत्तरी होती है। वर्षा ऋतु के समय खेत में जल निकास की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए। बुवाई के 5–6 दिन बाद खेत में खरपतवार उग आते हैं जिनके नियंत्रण हेतु आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई करनी चाहिए।

कीट रोग प्रबंधन

सामान्यतः रामदाने की फसल में कीट व्याधि का प्रकोप कम ही होता है। यदा–कदा पौधों पर पर्णजालक कीट का प्रकोप हो जाता है। यह कीट पत्तियों को क्षति पहुँचाता हैं। इसके नियंत्रण के लिए मिथाईल–ओ–डेमिटान या डाई मिथेएट के 0.1 प्रतिशत अथवा क्यूनालफॉस के 1.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना लाभप्रद रहता हैं।

जैविक खेती के अन्तर्गत कीट प्रबन्धन हेतु निम्नलिखित क्रियाकलाप अपनायें–

- सभी तितलीवर्गीय कीटों के नियंत्रण हेतु जैव कीटनाशी, *बैसिलस थूरिन्जिएन्सिस* को एक ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें।
- पर्णजालक कीटों के लिये इसके परजीवी कीट

ट्राइकोग्राम प्रजाति एवं *एपेन्टेलिस* प्रजाति तथा तम्बाकू की सूण्डी के लिए *टेलीनोमस रेमस, कैम्पोलेटिस क्लोरिड़ि* प्रजाति को बढ़ावा देना चाहिये।

कटाई एवं उपज

रामदाने की फसल लगभग 90–100 दिन में तैयार हो जाती है। बालियाँ हल्की पीली पड़ने पर कटाई कर लेनी चाहिए। विलम्ब से काटने पर दाने झड़ने लगते हैं। अच्छी प्रकार सुखाने के बाद मड़ाई कर दाना साफ कर लें। सामान्यतौर पर रामदाने की औसतन 1500–1600 किग्रा./है. तक दानों की उपज प्राप्त होती है। उन्नत सस्य विधियों का अनुसरण करते हुए 2000–2500 किग्रा./है. तक उपज ली जा सकती है। बुवाई के 30 दिन बाद पत्तियाँ हरी सब्जी के रूप में इस्तेमाल अथवा बाजार में बेच कर मुनाफा अर्जित किया जा सकता है। रामदाने में दाना पहले बाली के नीचे की तरफ बनता है तथा बाद में बाली के ऊपरी हिस्से में बनता है। जैसे ही बाली के ऊपरी हिस्से में दाना पूर्णतया विकसित हो जाए तो बाली की तुरन्त कटाई कर लेनी चाहिए अन्यथा वर्षा आने पर तथा हवा चलने पर काफी मात्रा में दाने झड़ सकते हैं। अगर बाली में रोएँदार कांटे हैं तो बाली को सुखाकर ही मड़ाई करें। वीएल चुआ 44 प्रजाति की बाली में काँटे नहीं होते, अतः कटाई के तुरन्त बाद इस प्रजाति की मड़ाई करने से दाना सुगमतापूर्वक निकलता है। मड़ाई के पश्चात् दानों को 3–4 दिनों तक अच्छी धूप में सुखाकर ही भण्डारण करें अन्यथा दानों में नमी होने के कारण दाना अंकुरित होकर खराब हो जाता है। इस प्रकार वैज्ञानिक तौर–तरीकों को अपनाकर पर्वतीय कृषक रामदाने की भरपूर उपज लेकर आर्थिक सुदृढ़ता प्राप्त कर सकते हैं।

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की उन्नति के लिए आवश्यक है।

– महात्मा गांधी

मैं दुनिया में सभी भाषाओं की इज्जत करता हूँ पर मेरे देश में हिन्दी की इज्जत न हो, यह मैं सह नहीं सकता।

– आचार्य विनोबा भावे

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उगल की उन्नत उत्पादन तकनीकी

दिनेश चन्द्र जोशी, राजेन्द्र प्रसाद मीणा एवं महेन्द्र सिंह भिण्डा
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

पोषण सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए पुनः एक बार वर्तमान में प्रचलित फसल चक्रों में मोटे अनाजों एवं अल्प प्रयुक्त फसलों को सम्मलित करना अति आवश्यक हो गया है। ऐसी कई अल्पयुक्त फसलों मे उगल पहाड़ी क्षेत्रों के लिए महत्वपूर्ण फसल है। यह फसल कम उर्वराशक्ति वाली भूमि तथा कम वर्षा वाले ऊँचे हिमालयी क्षेत्रों में आसानी से उगाई जा सकती है। गेहूँ, धान, इत्यादि की तुलना में इस फसल को काफी कम मात्रा में उर्वरक व पानी चाहिये होता है तथा इसमें पौष्टिक तत्व विशेषकर अमिनो अम्ल और खनिज लवण भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। फैगोपाइरम कुल के इस पौधे की मुख्यतः तीन प्रजातियां (*फैगोपाइरम एस्क्युलेंटम, फैगोपाइरम टटैरिकम* और *फैगोपाइरम साइमौसम*) उगाई जाती हैं। सामान्य बकव्हीट यानी (*फैगोपाइरम एस्क्युलेंटम*) एशिया से लेकर यूरोप, उत्तरी अमेरिका तथा दक्षिण अफ्रीका तक में उगायी जाती है जबकि फाफर यानि *फैगोपाइरम टटैरिकम* और *फैगोपाइरम साइमौसम* मुख्यतः भारत तथा दक्षिणी चीन के उच्च हिमालयी क्षेत्रों तक ही सीमित हैं।

उगल के पौष्टिक एवं औषधीय गुण

इसमें प्रोटीन की 10–18 प्रतिशत मात्रा पाई जाती है। प्रोटीन में मुख्यतः ग्लोबुलिन होता है जो प्रोटीन की पूरी मात्रा का आधा भाग होता है। इसमें पाये जाने वाले तत्व लाइसीन, जो कि बहुत ही महत्वपूर्ण अमिनो अम्ल होता है, की मात्रा गेहूँ और चावल से दुगुनी होती है। इसका प्रोटीन बाकी सभी अनाजों में पाई जाने वाले प्रोटीन की तुलना में सुपाच्य होता है। फाफर में पाई जाने वाली प्रोटीन का लगभग 74 प्रतिशत भाग मानव शरीर द्वारा पचा लिया जाता है। फाफर का अनाज वसा रहित होता है। इसके दानों में 1.5–3. 7 प्रतिशत लिपिडस होते हैं पर सबसे ज्यादा मात्रा (7–14 प्रतिशत) इसके भ्रूण में होती है। फाफर में पामिटिक, ओलेइक, लिनोलिक, आरकिड और लिग्नोसेरिक नामक वसा अम्ल पाए जाते हैं। इसमें कुछ ऐसे वसा अम्ल पाए जाते हैं जो कि अन्य अनाजों में होते ही नहीं है या फिर बहुत कम मात्रा में पाए जाते हैं (तालिका–1)।

रूटिन, जो एक बहुत ही महत्वपूर्ण औषधि के रूप में प्रयोग

होता है, जो फाफर की पत्तियों, तने, फूलों तथा दानों में पाया जाता है। रूटिन शरीर की नसों (धमनियों व शिराओं) को मजबूत व लचीला करता है जिससे हृदय सम्बन्धी बीमारियों (पुटिका सम्बन्धी/नकसीर) से बचाव हो जाता है। यह देखा गया है कि विटामिन सी के साथ रूटिन की कार्यक्षमता और भी बढ़ जाती है, इसलिए फाफर में पाया जाने वाला स्टेरोल खून में कोलेस्ट्रोल की मात्रा को भी बढ़ने से रोकता है। फाफर की कोमल पत्तियों का साग खाने से उच्च रक्तचाप की बीमारी में आराम मिलता है। इसमें विटामिन बी3 और बी2 पाई जाती हैं। विटामिन बी1 तन्त्रिका तन्त्र को सुचारू रूप से चलाने में सहायता करता है और विटामिन बी2 लिपिड्स को ठीक तरह से कार्य करने में सहायक होता है। यह रूधिर शर्करा को भी कम करता है। चीन, जापान आदि देशों में इसे मधुमेह के रोगियों को दवाई के रूप में दिया जाता है।

इसके दानों में स्टार्च मुख्य रूप में (59–70 प्रतिशत) पाया जाता है। इसकी मात्रा अलग–अलग किस्मों में विभिन्न हो सकती है, साथ ही इस पर स्टार्च निकालने की विधि का भी असर पड़ता है। इसके दानों में ओलिगोसैकेराइड (0.79–1.16 प्रतिशत) तथा पोलीसैकेराइडस (0.1–0.2 प्रतिशत) भी पाए जाते हैं। इसमें कोलिन नामक तत्व पाया जाता है जो लीवर की कार्यक्षमता को बढ़ाता है।

तालिका 1: मुख्य अनाजों की तुलना में उगल के पौष्टिक तत्व

पोषक तत्व	उगल	धान	गेहूँ	मक्का
ऊर्जा (किलो कैलोरी)	355	345	346	365
प्रोटीन (प्रतिशत)	12.0	6.8	11.8	9.4
कार्बोहाइड्रेट (प्रतिशत)	72.9	78.2	71.2	74.3
रेशा (प्रतिशत)	17.8	4.5	12.5	7.5
वसा (प्रतिशत)	7.4	1.5	2.5	4.7
नमी (प्रतिशत)	11.0	13.7	12.8	10.4
कैल्शियम (मिग्रा./100 ग्रा.)	110	10	30	7
लौहा (मिग्रा./100 ग्रा.)	4.0	0.7	3.5	2.7
मैग्नीशियम (मिग्रा./100 ग्रा.)	390	65	138	127
फॉस्फोरस (मिग्रा./100 ग्रा.)	330	160	298	210
मैंगनीज़ (मिग्रा./100 ग्रा.)	3.4	0.5	2.3	1.9
जस्ता (मिग्रा./100 ग्रा.)	0.8	1.3	2.7	2.3
पोटेशियम (मिग्रा./100 ग्रा.)	450	268	284	287
अनिवार्य अमीनो अम्ल				
लाइसीन (प्रतिशत)	5.9	3.8	2.6	1.9
मिथायोनीन (प्रतिशत)	3.7	3.0	3.5	3.2
ट्रिप्टोफॉन (प्रतिशत)	1.4	1.0	1.2	0.6
लियूसीन (प्रतिशत)	6.7	8.2	6.3	13.0
विटामिन				
थायमिन (प्रतिशत)	3.3	0.06	0.5	0.4
रिबोफ्लेविन (प्रतिशत)	10.6	0.06	0.2	0.2
नियासिन (प्रतिशत)	18.0	1.9	5.5	3.6
टोकोफेरोल (प्रतिशत)	40.0	-	-	-
पेन्टोथेनिक अम्ल (प्रतिशत)	11.0	-	-	-
कोलीन (प्रतिशत)	440	-	-	-

उपयोग

अनाज के रूप में: आमतौर पर फाफर को अनाज के रूप में ही प्रयोग किया जाता है। इसका आटा भारत, भूटान, नेपाल मे पहाड़ी क्षेत्रों में खाने के लिये इस्तेमाल किया जाता है। हमारे देश में इसे हिमाचल के कुल्लू, मण्डी, चम्बा, किन्नौर व लाहौल – स्पीति जिलों में मुख्य रूप से तथा उत्तराखण्ड के पिथौरागढ़, चमोली व पौड़ी जिलों में आटे से चिलड़ (घी में तली रोटी) बनाकर खाया जाता है। यदि फाफरा कड़वा है तो उसकी कड़वाहट निकालने के लिए दानों को कुछ देर तक गर्म पानी में उबाल लेना चाहिए। चूंकि इसमें ग्लूटिन की मात्रा कम होती है अतः चपाती बनाने के लिए इसके आटे के साथ गेहूँ या जौं के आटे को मिलाया जाता है।

साग के रूप में: इसे साग के रूप में सभी जगहों पर खाया जाता है। इसकी कोमल पत्तियों को साग के रूप में प्रयोग किया जाता है तथा कोमल तनों को बेसन में मिलाकर पकौड़े बनाए जाते हैं। गृह वाटिका में थोड़ी सी जगह में इसे लगाकर परिवार को समय–समय पर स्वादिष्ट सब्जी मिल जाती है।

मधुमक्खी पालन में सहायक: फाफर मधुमक्खी पालने वालों के लिए एक बहुत अच्छी फसल है क्योंकि इसके फूल काफी लम्बी अवधि तक खिले रहते हैं। इसके फूलों की एक विशेषता यह भी है कि ये सितम्बर महीने में खिलते हैं और इस समय अन्य पौधों में फूल कम होते हैं। मधुमक्खी पालक मधुमक्खियों के छत्तों को पहाड़ों में गर्मियों में (अप्रैल से सितम्बर तक) तथा सर्दियों में (अक्टूबर से मार्च तक) मैदानों की तरफ ले आते हैं। फाफर के फूलों से निकला शहद गाढ़े रंग का होता है तथा इसमें हल्की तीखी गन्ध होती है। फाफर के एक हैक्टेयर क्षेत्र से एक फसल से लगभग 175 किलो शहद निकल जाता है।

उन्नत उत्पादन तकनीकी

बोने का समय तथा भूमि की तैयारी: जो भूमि सामान्यतः कम उपजाऊ व थोड़ी रेतीली होती है, इसकी फसल के लिए उपयुक्त पाई गई है। इसकी खेती के लिए रेतीली दोमट, दोमट भूमि, जिसमें पानी के निकास का उपयुक्त प्रबन्ध हो, उचित रहती है। इसकी जड़ें भूमि से फॉस्फोरस ग्रहण करने में भी काफी सक्षम हैं, जबकी अन्य फसलों में यह गुण नहीं या बहुत कम पाया जाता है। ज़्यादा पानी वाली भूमि या वह स्थान जहां अधिक वर्षा होती है, इसके लिए उपयुक्त नहीं होती हैं क्योकि इसके तने टूट जाते हैं जिससे पत्तियां व फूल सड़ जाते हैं। इसके अन्दर अम्लीय भूमि में उगने की क्षमता भी है।

बीज दर और फसल ज्यामिति: इसकी बुआई बीज छिटककर या फिर हल के पीछे पंक्तियों में डालकर की जाती है। बुआई का तरीका चाहे कोई भी हो परन्तु यह ध्यान में रखना चाहिए कि बीज 2–3 इंच से गहरा नहीं डालना चाहिए। एक हैक्टेयर खेत के लिए लगभग 40–50 किलो बीज काफी होता है। बुआई करते समय यह भी ध्यान रखें कि इसकी दो पंक्तियों के बीच की दूरी 30 सेंटीमीटर और पौधे से पौधे की दूरी 8–10 सेंटीमीटर से कम नहीं रहनी चाहिए। इसके बीजों के उगने की क्षमता काफी सालों तक बनी रहती है लेकिन फिर भी अच्छी फसल के लिए एक साल से ज्यादा पुराना बीज प्रयोग में नहीं लाना चाहिये। बुआई के लिए किसानों द्वारा संग्रहित बीज ही प्रयोग में लाया जाता है लेकिन पिछले कुछ समय से इसकी उपजाऊ प्रजातियां जैसे कि हिमप्रिया, हिमगिरी, वीएल 7, के बी बी–3, इत्यादि विकसित की गई हैं (तालिका–3)। इनके प्रयोग से इसकी अच्छी उपज ली जा सकती है। सामान्यतः भारत में उगल की बुआई मानसून के आने में शुरू होती है तथा अगस्त के महीने तक चलती रहती हैं, परन्तु बुआई का समय एक स्थान से दूसरे स्थान तथा जलवायु विविधता के अनुसार बदलता रहता है (तालिका–2)। कम ऊँचाई वाले क्षेत्रों में इसकी बुआई मई से अगस्त तक की जाती है जबकी अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में अप्रैल से मई का महीना बुआई के लिए उपयुक्त है।

तालिका 2: भारत के विभिन्न क्षेत्रों में उगल की बुआई का समय

क्षेत्र	बुआई का समय
उत्तर–दक्षिण हिमालयी क्षेत्र	जून–जुलाई (वर्षा ऋतु) और मार्च–अप्रैल (बसंत ऋतु)

उत्तर पूर्वी हिमालयी क्षेत्र (असम सम्मलित करते हुये)	अगस्त–सितम्बर, (सिक्किम में : अक्टूबर–नवम्बर)
नीलगिरि पहाड़ी (तमिलनाडू)	अप्रैल–मई
पलानी पहाड़ी (तमिलनाडू और केरल)	जनवरी
छत्तीसगढ़	सितम्बर–नवम्बर

खरपतवार नियंत्रण एवं सिंचाई: सामान्यतः उगल एक बहुत अच्छी खरपतवार प्रतिरोधी फसल है फिर भी फसल की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण बहुत महत्वपूर्ण है। उगल की मुख्य खरपतवार प्रजाति उगल के फसल में पाये जाने वाले प्रमुख खरपतवार *डिजीटेरीस एंगयूनालिस* है जो कि हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखण्ड में पायी जाती हैं। इसी तरह सिक्किम व उत्तर–पूर्वी हिमालय क्षेत्रों में पाये जाने वाली प्रमुख खरपतवार *अमरेन्थस रैक्रोफ्रेसस, एमरोसिया टेनिसीफोलिया,* तथा *चिनोपोड़ियम एलबम* हैं।

बुआई के 15–20 दिनों बाद तथा फिर 35–40 दिनों बाद खरपतवार निकाल देनी चाहिए क्योंकि इस समय फसल छोटी होती है। इसे सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है क्योकि यह पहाड़ी क्षेत्रों में ज्यादातर बरसात के मौसम में उगाया जाता है। जब पौधे की ऊँचाई 5–6 सेन्टीमीटर के लगभग हो जाऐ तो थिनिंग (घने पौधों को निकालना) करके पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेन्टीमीटर कर देनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक: इस फसल को ज्यादा खाद की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि यह कम उपजाऊ भूमि पर भी आसानी से बढ़ती है। अच्छी उपज लेने के लिए खेत तैयार करते समय 25–30 कुन्तल सड़ी हुई गोबर की खाद डालनी चाहिए और बाद में 20 किलो नत्रजन, 20 किलो फॉस्फोरस व 20 किलो पोटाश देनी चाहिए। अधिक मात्रा में नाईट्रोजन (यूरिया) देने से पौधों में ज्यादा पत्ते लगते हैं जिससे उनके गिरने का भय रहता है ओर बीज भी कम बनता है। फॉस्फोरस को यह फसल आसानी से खपा लेती है और इससे शुष्क पदार्थ की मात्रा बढ़ती है।

अधिक पैदावार वाली प्रजातियां

प्रजाति	स्पीशिज़	फूल लगने की अवधि	पकने की अवधि	प्रोटीन प्रतिशत	औसत उपज किग्रा./हैक्टेयर
वीएल 7	सामान्य उगल	34	72	10.8	800
हिमप्रिया	फाफर	60	113	9.2	1400
पीआरबी 1	फाफर	48	102	11.4	1800
संगला बी 1	फाफर	66	122	-	1800

कटाई, मड़ाई एवं उपज :– इसकी फसल एक साथ नहीं पकती है, इसलिये कटाई करने में विशेष ध्यान रखना पड़ता है। जब लगभग 70–75 प्रतिशत फसल तैयार हो जाए तो कटाई शुरू कर देनी चाहिए क्योंकि यदि पकी हुई फसल को काटने में देरी हो जाए तो बीज गिरना शुरू हो जाते हैं। पैदावार में 10–20 प्रतिशत तक की कमी हो जाती है। ठीक ढ़ंग से लगाई गई फसल से किसान 700–800 किग्रा. उपज ले सकते हैं जबकि वैज्ञानिक विधि से इसकी उपज 1000–1200 किग्रा. तक बढ़ाई जा सकती है।

राष्ट्रीय व्यवहार में हिन्दी को काम में लाना देश की उन्नति के लिए आवश्यक है।

– महात्मा गांधी

उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों में कंगनी (फॉक्सटेल मिलेट) की उन्नत उत्पादन तकनीकी

राजेन्द्र प्रसाद मीणा, दिनेश चन्द्र जोशी एवं महेन्द्र सिंह भिण्डा
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

परिचय

कंगनी (*सेतिरिया इटालिका*) मोटे अनाज में दूसरी सबसे अधिक बोई जाने वाली फसल है। यह विश्व की प्राचीनतम फसलों में से एक है। पूर्वी एशिया में मुख्यतः चीन में इसे 6000 वर्ष ईसा पूर्व से उगाया जा रहा है। इसे चीनी बाजरा के नाम से भी जाना जाता है। यह एकवर्षीय घास है जिसका पौधा 4–7 फीट ऊँचा होता है, बीज बहुत महीन लगभग 2 मिलीमीटर के होते हैं। इनका रंग विभिन्न–किस्मों में भिन्न होता है, जिनका छिल्का पतला होता है जो आसानी से उतर जाता है। कंगनी से रोटियां, खीर, भात, इडली, दलिया, मिठाई, बिस्किट, आदि बनाये जाते हैं। भारत में यह मुख्य रूप से आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तेलंगाना, राजस्थान, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और कुछ हद तक भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में उगाया जाता है। उत्तराखंड के पहाड़ो में कंगनी की खेती बहुतायत में की जाती थी लेकिन जंगली सुअर और बंदरों के प्रकोप के चलते अभी इसकी खेती बहुत ही कम क्षेत्रफल में की जाती है। इसके चारे की गुणवत्ता मडुवा और मादिरा की तुलना में कम होती है जिसके चलते किसान निरंतर इसकी खेती को छोड़ रहे है। कंगनी एक पौष्टिक और सूखा–सहिष्णु फसल है जो उत्तराखंड में खाद्य एवं पोषण सुरक्षा की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है। कुल मिलाकर उत्तराखंड में कंगनी की खेती को बढ़ावा देने और प्रोत्साहित करने से खाद्य सुरक्षा, जलवायु रेसिलिएंस, मिट्टी के स्वास्थ्य, जैव विविधता संरक्षण, आय सृजन, पोषण और टिकाऊ कृषि प्रथाओं पर महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

कंगनी के लाभ

- आसानी से पचने के कारण इसे गर्भवती महिलाओं के लिए एक अच्छा भोजन माना जाता है और यह पेट के दर्द से भी राहत देता है।
- कंगनी का ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है और यह इंसुलिन का उत्पादन करने के लिए अग्नाशय की कोशिकाओं को उत्तेजित करती है। इस तरह से यह मधुमेह रोग के प्रभाव को कम करती है।
- यह मूत्र विसर्जन के समय होने वाली जलन से छुटकारा प्रदान करती है और यह अतिसार के रोगियों के लिए लाभप्रद होती है।
- कंगनी में प्रोटीन और लौह की मात्रा अधिक होती है, जो रक्तअल्पता में फायदेमंद होता है। यह जोड़ों के दर्द को दूर करने में मदद करती है।
- यह मोटे अनाज की श्रेणी में आती है, इनमें रेशे की मात्रा अधिक होती है जो मोटापे को नियंत्रित करता है।
- कंगनी में एंटीऑक्सीडेंट तत्व होते हैं, जो फ्री रेडिकल्स के प्रभाव को कम करते हैं, जिससे त्वचा स्वस्थ रहती है।

उन्नत सस्य विधियाँ

बुवाई का समय और विधि

कंगनी की बुवाई अप्रैल से जुलाई के बीच कभी भी की जा सकती है। किसान प्रायः इसकी बुवाई छिड़काव विधि से करते हैं। लेकिन छिड़काव विधि की अपेक्षा पंक्ति में बुवाई करने से उपज में बढ़ोत्तरी के साथ–साथ निराई–गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण में आसानी होती है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. रखनी चाहिए। एक हैक्टयर क्षेत्र के लिए 8–10 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है और बीज को बोने की गहराई 2–3 सेंटीमीटर होनी चाहिए। कंगनी की फसल की ऊँचाई 4 से 7 फुट तक हो जाती है और ये पकने के लिए 80 से 100 दिन का समय लेती है।

खाद एवं उर्वरक

मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग अच्छा रहता है। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 5–7 टन प्रति हैक्टेयर गोबर की खाद के साथ–साथ 40 किग्रा. नत्रजन तथा 20 किग्रा. फॉस्फोरस तथा 20 किग्रा. पोटाश प्रति हैक्टयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस तथा पोटाश की संपूर्ण मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा जुताई के समय पंक्ति में डाल देनी चाहिए। शेष नत्रजन, फसल जमने के लगभग एक माह पश्चात निराई के शीघ्र बाद छिड़क देनी चाहिए। अगर इसकी खेती जैविक कृषि के अंतर्गत की जाती है तो 10–15 टन प्रति हैक्टेयर सड़ी हुई गोबर खाद का प्रयोग करने से भी उतनी उपज मिलती है, जितनी रसायनिक उर्वरक प्रयोग करने से मिलती है।

खरपतवार नियंत्रण

कंगनी के खेतों में खरपतवार का प्रकोप बहुत होता है। फसल जमाव के 25–45 दिनों तक खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना अति आवश्यक होता है। बुवाई के 20–25 दिनों तथा 40–45 दिनों के पश्चात निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। खरपतवारनाशी रसायन आइसोप्रोट्रयूरोन खरपतवार नियंत्रण में अधिक लाभप्रद व कारगर साबित हुआ है। एक नाली के लिए 15 ग्राम आइसोप्रोट्रयूरोन पाउडर 15 लीटर पानी में घोल कर बुआई के तुरन्त या 24 घंटे के भीतर समान रूप से खेत में छिड़काव करें। खरपतवारनाशी रसायन तभी प्रभावकारी होगा, जब खेत में पर्याप्त नमी हो। अतः बुवाई तभी करें जब खेत में नमी हो। अगर खेती जैविक तरीके से करते हैं तो खरपतवार नियंत्रण रसायनों द्वारा नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में जैसे ही मई माह में वर्षा होती है तो खेत की जुताई कर एक माह तक खुला छोड़ दें। मानसून आने पर पुनः जुताई करके खरपतवारों पर आसानी से नियंत्रण पाया जा सकता है। बुवाई के 25–30 दिनों के पश्चात प्रथम निराई–गुड़ाई अवश्य करें। बुवाई के दौरान कतारों के बीच लाइव मल्च का प्रयोग करके भी खरपतवार के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

जल प्रबंधन

वैसे तो कंगनी सूखारोधी तथा जलवायु रेसिलिएंट फसल है परन्तु लम्बे समय तक वर्षा न होना या ज्यादा

वर्षा व जल भराव इसकी उपज पर नकारात्मक प्रभाव डालता है चूँकि इसके रेशेदार जड़ प्रणाली ज्यादा गहराई से नमी का शोषण नहीं कर पाती है कल्ले निकलते एवं दाने बनते समय जल का उचित प्रबंधन उपज के लिए अच्छा होता है।

फसल चक्र

कंगनी–गेहूँ, कंगनी–मसूर, कंगनी–सरसों आदि फसल चक्र पहाड़ों में प्रचलित हैं साथ ही कंगनी को गहत, काली सोयाबीन (भट) और सांवा की फसल के साथ अंतर–फसल या मिश्रित फसल प्रणाली के रूप में उगाना प्रचलित है। कंगनी की फसल 100 दिन में पक जाती है इसलिए बुवाई के समय इस बात का ध्यान रखिये कि अगर बुवाई अप्रैल में कर रहे हैं तो कंगनी को ज्यादा पानी देने की जरूरत पड़ सकती है, खरपतवार की समस्या भी बढ़ सकती है और ये फसल जुलाई में पकेगी। अगर बुवाई मई में करते हैं तो ये अगस्त में पकेगी।

कीट और रोग प्रबंधन

कंगनी को आम तौर पर कोई कीट और रोग नहीं लगता। जितना कम सिंचाई के पानी का उपयोग होगा उतने ही कीट या रोग आने की संभावना भी कम हो जाती है और पौधे की जड़ें भी उतनी ही मजबूत होती हैं। कम पानी देने से दाना अच्छा बनता है और उसका वजन भी बढ़ता है। छिलका पतला रहता है जिससे प्रति कुन्तल दाने का भार ज्यादा और छिलके का वजन कम रहता है।

फसल की कटाई

जब कंगनी की बालियाँ हरे रंग से पक कर पीले भूरे रंग की हो जाएं, तब फसल काटने के लिए तैयार हो जाती है। कंगनी के पौधे से केवल बालियां या पकने के बाद पूरा पौधा भी जमीन से काटा जा सकता है। दानों को थ्रैशर की मदद से नाड़ से अलग किया जा सकता है। कंगनी की फसल को पकते समय छोटी लाल–भूरे रंग की चिड़ियाँ उसके दाने चुगती हैं, अतः रखवाली की भी जरूरत पड़ सकती है।

कुछ खास बातों का ख्याल रखें

- उपयुक्त किस्मों का चुनाव करें तथा उपयुक्त समय पर बोऐं।
- बुवाई से पहले खेत में नमी सुनिश्चित करें या वर्षा का लाभ उठाते हुए बुवाई करें।
- देर होने पर प्रजातियों का परिवर्तन करें। देर से बुवाई के लिए अग्रिम प्रजातियाँ लाभकारी होती हैं।
- फसल को उचित बीज दर पर कतार में बोऐं। कतार में होने से पौध संख्या सही और अतांकर्षण सुविधाजनक होगा।
- खेत में पौधों की पर्याप्त संख्या रखें। कम पौधे रहने पर उतनी ही लागत में कम उपज होगी तथा आर्थिक लाभ में भी कमी होगी। 15–20 दिन के भीतर पौधों की संख्या समुचित करने हेतु रोपाई करें।
- खेत में अतिरिक्त पानी न रूकने दें। वायु संचार प्रभावित होने से पौधों की वृद्धि रूकती है तथा पौधे रोग से प्रभावित हो सकते हैं।
- खरपतवार तथा फसल सुरक्षा के उपाय उचित समय पर करें।
- उन्नत यंत्रों को बुवाई, निराई, मड़ाई एवं गहाई के लिए अवश्य प्रयोग करें। इससे श्रम में बचत तथा क्षमता में वृद्धि होगी।
- फसल की समय से कटाई करें अन्यथा दानों के झड़ने तथा कंगनी में चिड़ियों के द्वारा उपज में कमी आ जाती है।
- नमी रहित जगह में कंगनी के दानों का भन्डारण करें।

हिन्दी भारतीय संस्कृति की आत्मा है।

– कमलापति त्रिपाठी

कुपोषण एवं बदलते जलवायु परिवर्तन परिदृश्य में क्षमतावान फसल क्विनोआ की खेती

महेन्द्र सिंह भिण्डा, दिनेश चन्द्र जोशी, रेनू सनवाल एवं लक्ष्मी कान्त
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

वर्तमान समय में दुनियाभर के लोगों की जीवन शैली में बदलाव होने से गैर संक्रामक बीमारियों के खिलाफ प्रतिरक्षा में गिरावट आ रही है। मौजूदा खाद्य आपूर्ति का 50 प्रतिशत से अधिक हिस्सा तीन मुख्य खाद्य फसलों नामतः चावल, गेहूँ और मक्का द्वारा पूरा किया जा रहा है। मुख्य खाद्य फसलों में संतुलित पोषण के लिए आवश्यक अमीनो अम्लों, विटामिनों और खनिज तत्वों की कमी पाई जाती है। अगर कुपोषण की बात करे तो भारत में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में कुपोषित लोगों का अनुपात बच्चों (5 वर्ष से कम आयु वाले), किशोरियों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं में सबसें अधिक पाया जाता हैं। देश के विभिन्न राज्यों में कुपोषण अलग–अलग रूप में दिखाई देता है। लेकिन भारत में कुपोषण का सबसे अधिक दुष्प्रभाव बच्चों में दिखाई देता है। इसके साथ ही जलवायु में होने वाले बदलावों की वजह से मुख्य फसलें विभिन्न प्रकार के खतरों जैसे कीटों, बीमारियों, अधिक तापमान और सूखा आदि समस्याओं की चपेट में आ रही हैं। इसके साथ ही इस सीमित निर्भरता से फसल प्रजातियों की विविधता को तेजी से नुकसान हो रहा है तथा कई पादप प्रजातियाँ विलुप्ति के कगार पर पहुँच गई हैं। ऐसी परिस्थितियों में हमें उन फसलों के चुनाव एवं संरक्षण पर जोर देने की आवश्यकता है, जो विषम वातावरण में खाद्य एवं पोषण सुरक्षा को पूरा करने के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। इसलिए देश तथा दुनियाभर में क्विनोआ जैसी क्षमतावान फसलों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

फसल विविधीकरण द्वारा खेती में कम उपयोग होने वाली फसलों जैसे क्विनोआ का समावेश करके कुपोषण तथा जलवायु परिवर्तन से लड़ने के लिये एक महत्वपूर्ण रणनीति हो सकती है। क्विनोआ में पायी जाने वाली असाधारण पोषण संबंधी विशेषताएँ तथा विभिन्न कृषि पारिस्थितिकियों में अनुकूलनता लाभकारी हो सकती है।

परिचय

क्विनोआ बथुआ प्रजाति का पौधा है, जो मूल रूप से दक्षिणी अमेरिकी देशों में पाया जाता है। इसका वानस्पतिक नाम – *चेनोपोडियम क्विनोआ* है। क्विनोआ का उपयोग अनाज की भांति होने के कारण इसे कूट–अनाज (*स्यूडो सिरियल्स*) भी कहा जाता है। इसका उपयोग सूप, दलिया, व रोटी के रूप मे किया जा सकता है। इसकी पत्तियों का भी सब्जी के रूप में काम लिया जा सकता है। इसके अलावा क्विनोआ के आटे से कई तरह के मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे नमकीन, लड्डू, चकली, पापड़, चिक्की, आदि भी बनाये जा सकते हैं। क्विनोआ की खेती के अद्वितीय लाभ इसके उच्च पोषण मूल्य तथा जलवायु की अत्यधिक विषम परिस्थितियों में उगने की क्षमता के कारण होते हैं। इसलिये क्विनोआ की विभिन्न विशेषताओं जैसे असाधारण पोषण संबंधी गुण, विभिन्न वातावरण हेतु अनुकूलता एवं कुपोषण के खिलाफ लड़ने में संभावित महत्वपूर्ण योगदान को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा वर्ष 2013 को अंतर्राष्ट्रीय क्विनोआ वर्ष घोषित किया गया।

आज से लगभग 8–10 वर्ष पहले देश के कई भागों मे कृषि मे नवाचारों को आगे बढ़ाते हुए दक्षिणी अमेरिकी देशों मे होने वाले क्विनोआ की खेती को प्रयोगिक तौर पर शुरू किया गया था जिसकी सफलता के बाद कई राज्यों में इसकी खेती की जा रही है। हमारे देश में पिछले 4–5 वर्षों में इस पोषक फसल ने बाजार में अपनी जगह बना ली है। भारत में स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोगों में क्विनोआ खाने का चलन तेजी से बढ़ रहा है। हालांकि, अभी तक इसकी बिक्री बड़े शहरों के मॉल और वाणिज्यिक वेबसाइट्स पर अधिक कीमत पर ही उपलब्ध है।

रूपात्मक विशेषताएँ

क्विनोआ पौधे की ऊंचाई लगभग 1–2 मीटर तक होती है। पौधों पर पत्तियां आमतौर पर हरे रंग की होती हैं लेकिन परिपक्व होने पर पीले, लाल या बैंगनी रंग की हो जाती हैं। तना मोटा, सीधा और काष्ठीय प्रकार का, शाखाओं वाला या शाखारहित होता है, जिस पर एकांतरित, चौड़े पत्ते होते हैं। पुष्पक्रम पैनिकल प्रकार का होता है जो हरे, बैंगनी, सफेद, लाल या लाल और बैंगनी रंग के मिश्रण में मौजूद हो सकता है। क्विनोआ में आमतौर पर स्व–परागण होता है, लेकिन 5 से 10% तक पर–परागण भी पाया जाता है। आमतौर पर बुवाई के 60–70 दिन बाद फूल आना शुरू हो जाते हैं और पुष्पन अनिश्चित प्रकार का होता है। क्विनोआ के बीज आकार में बहुत छोटे (2–3 ग्राम प्रति 1000 बीज), गोल, सपाट और लगभग 2–3 मिमी व्यास के होते हैं।

क्विनोआ फसल का प्रक्षेत्र दृश्य

पोषक तत्वों का खजाना

क्विनोआ में कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, वसा, फाइबर, विटामिन तथा खनिज प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। क्विनोआ में प्रोटीन की मात्रा लगभग 16 प्रतिशत तक पाई जाती है। क्विनोआ प्रोटीन में, मुख्य अनाजों की तुलना में, सभी आवश्यक 9 अमीनो अम्लों मुख्यतः लाइसिन (6 ग्राम प्रति 100 ग्राम प्रोटीन) व मेथिओनिन (5.3 ग्राम प्रति 100 ग्राम प्रोटीन) की अधिक मात्रा एवं संतुलित वितरण पाया जाता है, जिसका जैविक मूल्य दूध में मिलने वाले प्रोटीन के बराबर होता है। इसी प्रकार इसमें गेहूँ, चावल व मक्का की अपेक्षा, लिपिड, विटामिन बी1, बी2, बी6, सी और ई, तथा खनिज, विशेष

रूप से कैल्शियम, मैग्नेशियम, पोटेशियम, और लौह की अधिक मात्रा पाई जाती है। क्विनोआ में वसा की मात्रा लगभग 7 प्रतिशत होती है, जो आवश्यक वसीय अम्ल जैसे लिनोलिक और एल्फा–लिनोलेनिक में समृद्ध तथा इसमें एंटीऑक्सिडेंट जैसे एल्फा और गामा–टोकोफेरोल की उच्च सांद्रता पाई जाती है। क्विनोआ को अपने गुणों एवं पोषक तत्वों की अधिकता के कारण सुपरग्रेन या मदरग्रेन व सुपर फूड की संज्ञा दी गई है।

क्विनोआ के स्वास्थ्य संबन्धित प्रमुख लाभ

इसके बीजों में गेहूँ की तुलना में ग्लूटिन (एक प्रकार का प्रोटीन) नहीं पाया जाता है, अतः सिलियक रोग से पीड़ित लोगों के लिए यह वरदान है। इसका ग्लाइसेमिक सूचकांक बहुत कम होने के कारण यह रक्त में इंसूलिन के स्तर को संतुलित करता है, जिससे क्विनोआ के रोजाना सेवन से मधुमेह की समस्या नियंत्रित होती है। क्विनोआ एंटीऑक्सीडेंट का अच्छा स्रोत है जो शरीर के खतरनाक फ्री रेडिकल्स को खत्म करके ऑक्सीडेटेव तनाव को कम करने में सहायता करता है। इसके नियमित सेवन से कैंसर जैसे खतरनाक रोग की संभावना कम हो जाती है। क्विनोआ, लौह का भी अच्छा स्रोत होने के कारण रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा को बढ़ाकर, एनीमिया को रोकने में मददगार होता है। साथ ही क्विनोआ के नियमित सेवन से उच्च रक्तचाप व हदय रोग को भी नियंत्रित किया जा सकता है क्योंकि इसमें उच्च मात्रा में रेशा होता है जो कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित करता है।

क्विनोआ के अन्य लाभ

- क्विनोआ में अच्छी गुणवत्ता वाले प्रोटीन की अधिक मात्रा होती है, जो शरीर में कोशिकाओं और उतकों के निर्माण एवं मरम्मत के लिए आवश्यक है। यह चयापचय को बढ़ाता है, जिससे बच्चों के शारीरिक व मानसिक विकास होता है।
- क्विनोआ में रेशे की अच्छी मात्रा होती है, जो पाचन तंत्र के लिए बहुत अच्छा होता है और शरीर कों ऊर्वाजान बनाये रखता है। इस वजह से लंबे समय तक भूख भी नहीं लगती एवं वजन नियंत्रित रहता है।
- क्विनोआ, कैल्शियम और फॉस्फोरस की अधिकता की वजह से, हड्डियों कों मजबूत बनाये रखने में सहायक है।
- क्विनोआ में पाये जाने वाले तत्वों जैसे क्वेरसेटिन और केम्फेरोल के कारण इसमे एंटी– इन्फलेमेट्री गुण पाये जाते हैं जिससे दर्द व सूजन को कम करने में मदद मिलती है।

क्विनोआ की खेती के लिए आवश्यक जलवायु दशाएँ

क्विनोआ की खेती का समय स्थानीय जलवायु पर निर्भर करता है। उत्तर भारत के राज्यों में इसे रबी के मौसम मे उगाया जाता हैं, जबकि उच्च पर्वतीय क्षेत्र एवं दक्षिण भारत मे खरीफ मौसम मे भी उगाया जा सकता है। अच्छा उत्पादन लेने के लिए 15 से 25 डिग्री सेल्सियस का तापमान सबसे उपयुक्त रहता है। क्विनोआ में अत्यधिक ठंड (–5 डिग्री सेल्सियस) या उच्च तापमान (35 डिग्री सेल्सियस तक) तथा लवणीय, अम्लीय या क्षारीय मिट्टी के लिए अच्छी सहिष्णुता पाई जाती है। क्विनोआ एक सूखा–सहिष्णु फसल है जिसको कम पानी की आवश्यकता होती है। औसतन 200 – 500 मिलिमीटर वर्षा वाले क्षेत्रों मे क्विनोआ की खेती की जा सकती है। कम पानी वाली फसल होने से, रबी के मौसम में एक से दो सिंचाई अच्छी फसल लेने के लिये पर्याप्त होती है। वैसे तो इस फसल को सभी तरह की मिट्टियों में उगाया जा सकता है लेकिन क्विनोआ की अच्छी उपज के लिए बलुई–दोमट मिट्टी, जिसका पी. एच. मान 5 से 7 के बीच हो तथा ऐसी भूमि जिसमे जल निकास की उचित व्यवस्था हो, वह सबसे उपयुक्त रहती है।

क्विनोआ की उन्नत उत्पादन तकनीकी व फसल प्रबंधन

क्विनोआ की उन्नत उत्पादन तकनीक या वैज्ञानिक खेती के माध्यम से उत्पादन वृद्धि हेतु खेत की तैयारी से लेकर फसल की कटाई व भन्डारण तक उन्नत उत्पादन तकनीकें शामिल की जाती हैं।

❖ खेत की तैयारी

क्विनोआ की खेती के लिये मिट्टी पलटने वाले हल से एक से दो जुताई करना चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाना चाहिए जिससे मिट्टी अच्छी तरह से भुरभुरी हो जाए। ऐसा करने से बीजों का अंकुरण अच्छा होने के साथ–साथ पौधों की वृद्धि भी बढ़िया होती है तथा अच्छी उपज प्राप्त होती है।

❖ खाद एवं उर्वरक

आमतौर पर क्विनोआ की खेती बिना उर्वरक प्रयोग के की जाती है। मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये खेत तैयार करते समय एफ.वाई.एम. 5–10 टन प्रति हैक्टेयर डालना चाहिए। रासायनिक खाद के रूप में प्रति हैक्टेयर, 40 किलो नत्रजन, 20 किलो फॉस्फोरस व 20 किलो पौटेशियम काम में लेना चाहिए। इसकी खेती मे जैविक खादों के उपयोग को प्राथमिकता देनी चाहिए। जैविक खेती के लिये एफ.वाई.एम. 10–15 टन प्रति हैक्टेयर की लागत होती है।

❖ उन्नत प्रजातियाँ

बीज के रंग के आधार पर क्विनोआ मुख्यतः तीन प्रकार का होता हैं – लाल, सफेद एवं काला। तीनों ही तरह का क्विनोआ आयरन और प्रोटीन की भरपूर मात्रा होने के कारण स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक माना जाता है। परन्तु, सबसे ज्यादा प्रचलित क्विनोआ सफेद रंग का होता है। सफेद रंग की मुख्य प्रजातियाँ हिम शक्ति तथा अन्य उन्नत जर्मप्लास्म लाइनें जैसे ईसी–507740, ईसी– 507744 तथा ईसी– 507747 मुख्य हैं।

क्विनोआ की काली एवं सफेद रंग की प्रजातियाँ

❖ बुआई का उपयुक्त समय

क्विनोआ की बुआई का समय स्थानीय जलवायु पर निर्भर करता है।

- निचले पर्वतीय क्षेत्र/मैदानी क्षेत्र – मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक
- मध्यम ऊँचाई वाले क्षेत्र – नवम्बर अन्त से मध्य दिसम्बर तक
- उच्च पर्वतीय क्षेत्र – मध्य मई से मध्य जून

❖ बीज उपचार

बीजों को बुवाई से पूर्व 2 ग्राम/किग्रा बीज की दर से कार्बेन्डाजीम से उपचारित करना चाहिये। जैविक खेती की दशा में उक्त बीजोपचार 10 ग्राम/किग्रा बीज की दर से स्यूडोमोनास तथा ट्राइकोडर्मा के मिश्रण से उपचारित करना चाहिये। बीजोपचार के उपरान्त 20 मिनट तक बीजों को छायादार स्थान पर सुखा लेना चाहिये। सूखने के पश्चात ही उपचारित बीज की बुवाई प्रातःकाल या सायंकाल में करें।

❖ बीज दर

क्विनोआ के बीज अत्यधिक छोटे एवं हल्के होने के कारण बुवाई के लिए कम बीज की जरूरत होती है। एक हैक्टेयर क्षेत्र में बुवाई करने के लिए 8 से 10 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है। बीज अत्यधिक छोटे होने के कारण बुवाई से पूर्व बीजों को बारीक मिट्टी या रेत के साथ मिला लेना चाहिए ताकि बीजों का वितरण खेत में समान रूप से किया जा सके।

❖ बुआई विधि

क्विनोआ की अच्छी उपज लेने के लिए इसकी बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिए। इस विधि से पौधों के बीच उचित दूरी बनाये रखने में मदद मिलती है तथा निराई–गुड़ाई में आसानी रहती है। बुवाई की गहराई दो से तीन सेमी. से अधिक नहीं होनी चाहिए। बुवाई के दौरान एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति के बीच की दूरी 40 से 50 सेमी. तथा पौधे से पौधे के बीच की दूरी 10 से 15 सेमी. रखनी चाहिए।

❖ खरपतवार नियंत्रण

क्विनोआ में अच्छी उपज के लिए बुवाई से 40–45 दिनों तक फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना आवश्यक

होता है। इसके लिए बुवाई के बाद 30 से 35 दिनों पर एक बार निराई–गुड़ाई अवश्य करनी चाहिय।

❖ कटाई व मड़ाई

क्विनोआ फसल की कटाई उचित समय पर कर लेनी चाहिए, अन्यथा दानों के झड़ने से उपज में कमी आ जाती है। जब पौधे सूखकर हल्का पीले या लाल रंग के हो जाये और पत्तियाँ झड़ने लग जाये तब कटाई करना सही रहता है। कटाई के दौरान बारिश होने के कारण पके हुए दानों में अंकुरण होने की संभावना रहती है इसलिए बारिश के समय कटाई करने से बचना चाहिए। कटाई के बाद खेत में पौधों को कुछ समय तक सुखाना चाहिए, जिससे नमी की मात्रा कम हो जाये। कटाई के बाद डंडों से कूटकर या मशीन द्वारा बीजों को आसानी से अलग किया जा सकता है। मड़ाई के बाद बीजों को छानकर अलग कर लेते है। मड़ाई के बाद 3 से 4 दिनों तक बीजों को धूप में सुखाना चाहिए।

❖ कटाई उपरांत प्रसंस्करण

क्विनोआ के दानों के ऊपरी परत पर सेपोनिन नामक एक अपोषक तत्व पाया जाता है। इसके कारण क्विनोआ में विशेष कड़वापन/कैसेलापन पाया जाता है। क्विनोआ में सेपोनिन की मात्रा कम होने पर मिठास बढ़ जाती है जिस वजह से यह उपभोक्ताओं द्वारा अधिक पसंद किया जाता है। इसलिए प्रसंस्करण द्वारा या पानी में 4–5 घंटे तक भिगोकर एवं हाथ से रगड़कर ऊपरी परत उतारने के बाद ही इसका उपभोग करना चाहिये।

❖ उपज

यह फसल करीब 120 से 150 दिनों मे पककर तैयार हो जाती है। इसकी खेती से प्रति हैक्टेयर लगभग 1500–2000 किग्रा. उपज प्राप्त की जा सकती है।

❖ भण्डारण

बीजों का भंडारण ठंडे और सूखे स्थान पर करना चाहिए।

हम कह सकते हैं कि जलवायु परिवर्तन की वजह से जल संसाधनों में कमी के साथ ही मिट्टी व पानी की लवणीयता बढ़ने से फसल उत्पादन में लगातार कमी आ रही है। इसके साथ ही बढ़ती आबादी के लिए खाद्य और पोषण सुरक्षा को पूरा करना एक गंभीर चुनौती बनती जा रही है। देश के पर्वतीय राज्यों विशेषकर उत्तराखण्ड जहां पर मिट्टी कम उर्वरकता वाली तथा 90 प्रतिशत खेती योग्य भूमि वर्षा के पानी पर निर्भर है, उन क्षेत्रों में यह समस्या और अधिक विकट होती जा रही है। इसलिए उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों के लिए क्विनोआ की खेती एक वरदान साबित हो सकती है, क्योंकि क्विनोआ की खेती विपरीत परिस्थितियों में भी कम लागत पर अच्छा उत्पादन देने के साथ ही पोषण सुरक्षा को पूरा करने में महत्वपूर्ण योगदान देने की क्षमता रखती है।

हिन्दी उन सभी गुणों से अलंकृत है, जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषा की अगली श्रेणी में समाचीन हो सकती है।

– राजेन्द्र प्रसाद

भाषा की सरलता, सहजता और शालीनता अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करती है। हिन्दी ने इन पहलुओं को खूबसूरती से समाहित किया है।

–नरेन्द्र मोदी

पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत श्री अन्न (कदन्न) फसलों की उन्नत उत्पादन तकनीकियां

महेन्द्र सिंह भिण्डा, विनेश चन्द्र जोशी, रेनू सनवाल एवं लक्ष्मी कान्त
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

परिचय

"श्री अन्न" (कदन्न) या मोटा अनाज फसलों के अन्तर्गत छोटे दानें वाली वार्षिक घास फसलें आती हैं, जो पोएसी परिवार में शामिल की जाती हैं। कदन्न (मिलेटस) फसलों को प्रमुख तथा छोटे या लघु कदन्न समूह में बांटा जाता है। ज्वार और बाजरा प्रमुख कदन्न हैं, जबकि लघु कदन्न अनाजों में रागी/मंडुवा (फिंगर मिलेट), कौणी (फॉक्सटेल मिलेट), झंगोरा/मादिरा/सांवा (बार्नयार्ड मिलेट), कुटकी (लिटिल मिलेट), चीना (प्रोसो मिलेट) और कोदो मिलेट आदि शामिल किये जाते हैं, जिनका विवरण तालिका–1 में दिया गया है। श्री अन्न या कदन्न फसलें देश के शुष्क क्षेत्रों में पहाड़ी और जनजातीय खेती का एक अनिवार्य घटक रही है। ये फसलें अतीत में खाद्य आपूर्ति का एक बड़ा हिस्सा प्रदान करने के लिए जिम्मेदार थीं। ये क्षेत्रीय पारंपरिक फसलें बदलती जलवायु परिस्थितियों के प्रति अधिक अनुकूलित होने के साथ–साथ पोषण मूल्य में भी उच्च हैं। गेहूँ, चावल और मक्का जैसी प्रमुख खाद्य फसलों की तुलना में यें फसलें प्रोटीन, विटामिन और खनिजों से भरपूर हैं। इन अनाजों को सूक्ष्म पोषक तत्वों, रेशे, ग्लूटेन–मुक्त, प्रतिरोधी स्टार्च और विभिन्न फाइटोकेमिकल्स के संदर्भ में उनके आश्चर्यजनक पोषणमान के कारण पौष्ट–धान्य/अद्भुत अनाज/पोषक–अनाज कहा जाता है। कदन्न

फसलें कम लागत और सीमांत खेती की स्थितियों के प्रति अनुकूलन क्षमता के कारण खेती के मामले में अन्य वाणिज्यिक फसलों से बेहतर हैं। लघु–कदन्न फसलें विशेष रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में खाद्य और पोषण सुरक्षा को पूरा करने, मवेशियों के लिए चारा उपलब्ध कराने, जैव विविधता में सुधार तथा किसानों की आय में वृद्धि के साथ ही संभावित रूप से प्रतिरक्षा को बढ़ाने के लिए भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम हैं।

श्री अन्न फसलों के स्वास्थ्य संबन्धित प्रमुख लाभ

श्री अन्न (कदन्न) फसलों को कई स्वास्थ्य लाभों के लिए जाना जाता है, जिसके लिए पॉलीफेनोल, फाइबर, ग्लूटेन–रहित तथा स्टार्च–रहित कार्बोहाइड्रेट आदि जिम्मेदार होते हैं। श्री अन्न अनाजों एवं उनके उत्पादों के नियमित सेवन से हृदय रोग, मधुमेह, गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल कैंसर तथा अन्य विकारों पर नियंत्रण रखा जा सकता है।

- कदन्न फसलों का ग्लाइसेमिक सूचकांक बहुत कम होने के कारण यह रक्त में इंसुलिन के स्तर को संतुलित करता है, जिसके रोजाना सेवन करने से मधुमेह की समस्या नियंत्रित होती है।
- कदन्न अनाजों में गेहूँ की तुलना में, ग्लूटेन (एक प्रकार का प्रोटीन) नहीं पाया जाता है, अतः ग्लूटेन संवेदी आंत रोग से पीड़ित लोगों के लिए यह वरदान है।
- कदन्न फसलों में पाई जाने वाले उच्च फाइबर, रक्त में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करते हैं जिससे हृदय रोगों को रोकने में मदद मिलती है। इसके साथ ही फाइबर की उच्च मात्रा पाचन में सहायक होने के साथ ही वजन को नियंत्रित करने में भी सहायक होता है।
- कदन्न अनाज, कैल्शियम और फॉस्फोरस की अधिकता की वजह से हड्डियों को मजबूत बनाये रखने में सहायक हैं।
- कदन्न में पाये जाने वाले फेनोलिक अम्ल, टैनिन, फाइटेट्स और फाइबर के कारण उत्परिवर्तीरोधक एवं कैंसरकारक रोधी गुण पाया जाता है। इसलिए इनके नियमित सेवन से विभिन्न प्रकार के कैंसर के संभावित खतरों को कम किया जा सकता है।

आवश्यक जलवायु दशाएँ

कदन्न अनाज विषम जलवायु के अनुकूल, कठोर और शुष्क क्षेत्र की फसलें होती हैं। इन फसलों को कम वर्षा (200–600 मिमी.) वाले क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है। ये सभी फसलें कम अवधि की हैं जो 2 से 4 महीनों में अपना जीवन चक्र पूरा कर लेती हैं। सभी कदन्न फसलें अनिवार्य रूप से खरीफ मौसम की फसलें हैं, जो मानसून अवधि में अपना जीवन काल पूरा कर लेती हैं। ये फसलें, व्यापक अनुकूलन, स्थानांतरित खेती तथा प्रकृति की अप्रत्याशित विषमताओं को सहन करनें में सक्षम होती हैं। कदन्न फसलें विभिन्न कृषि–पारिस्थितिक स्थितियों जैसे मैदानी, तटीय और पर्वतीय के साथ–साथ विविध मिट्टी और वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाई जा सकती हैं। कदन्न फसलें जलवायु परिवर्तन के कारकों का सामना करने के लिये आकस्मिक फसल योजना के लिए सबसे अधिक उपयुक्त मानी गई हैं।

तालिका–1: विभिन्न श्री अन्न (कदन्न/मिलेट्स) फसलों का विवरण

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम	अन्य नाम	मुख्य उत्पादक राज्य	उन्नत प्रजातियाँ
सौरघम मिलेट	*सोरघम बाइकलर*	ज्वार	महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु, हरियाणा कर्नाटक	सीएसएच 14, सीएसएच 16, सीएसएच 23, सीएसवी 17, सीएसएच 30, सीएसएच 45

सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम	अन्य नाम	मुख्य उत्पादक राज्य	उन्नत प्रजातियाँ
पर्ल मिलेट	*पेनिसेटम ग्लोकम*	बाजरा	महाराष्ट्र, हरियाणा राजस्थान, आंध्र प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश	पूसा 1201, बीएचबी 1202, एमपीएमएच 21, एचएचबी 272, पीएचबी 2884 एचएचबी 299
फिंगर मिलेट	*इलुसिन कोरैकाना* (एल.)	मंडुवा, रागी, नाचनी, नागली, मंढूका	कर्नाटक, उत्तराखंड, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा, झारखंड, महाराष्ट्र	वीएल मंडुवा 352, वीएल 376, वीएल मंडुवा 348, वीएल मंडुवा 379, वीएल मंडुवा 380, वीएल मंडुवा 382, वीएल मंडुवा 400
फॉक्सटेल मिलेट	*सिटेरिया इटालिका* (एल.)	कांगनी, कौणी, इटालियन मिलेट, काकुन, ब्रिसेल मिलेट	मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड, महाराष्ट्र, कर्नाटक	एसआईए 3085, सूर्यानंदी (एसआईए 3088), एसआईए 3156
बार्नयार्ड मिलेट	*इचिनोक्लोंआ एस्कुलेंटा* (एल.) और *इचिनोक्लोंआ फ्रूमेन्टेसिया* (एल.)	जापानी मिलेट, मादिरा, साँवा, झंगोरा, श्यामा, बांटी	उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश	एमडीयू–1, डीएचबीएम 93–3, डीएचबी–93–2, पीआरजे 1, वीएल मादिरा 172, वीएल मादिरा 207
प्रोसो मिलेट	*पैनिकम मिलियासीम* (एल.)	चीना, कॉमन मिलेट, बार्री, बरागु, वरीगा	मध्य प्रदेश, पूर्वी उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, बिहार, महाराष्ट्र, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक	डीएचपी–2769, टीएनएयू 202, पीआरसी 1, प्रताप चीना–1, टीएनएयू 164
कोदो मिलेट	*पासपैल्म स्क्रोबिकुलेट्म*	वरागु, कोडरा, हरका	मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात, छत्तीसगढ़, कर्नाटक	जेके 65, जेके 98, इन्दिरा कोदो 1, जवाहर कोदो 137, डीपीएस 9–1, आरके 390–25
लिटिल मिलेट	*पैनिकम मिलियरे*	कुटकी, सामा, सांवा, समाई	कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, आंध्र प्रदेश	ओएलएम 207, जेके–36, जवाहर कुटकी 4, फुले एकादशी, डीएचएलएम–14–1, बीएल 6, जीवी – 2

उत्तर पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में श्री अन्न फसलें

खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से कदन्न फसलें उत्तराखण्ड के ऊँचाई वाले क्षेत्रों के लिए एक महत्वपूर्ण फसल समूह हैं। कदन्न फसलों में मंडुवा (रागी) तथा मादिरा (झंगोरा या सांवा) ही मुख्य रूप से उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में खरीफ ऋतु में उगायी जाती हैं, जिनका उत्पादन परिदृश्य तालिका–2 में दिया गया है। उत्तर–पश्चिमी हिमालय में लगभग 149.00 हजार हैक्टेयर से अधिक क्षेत्रफल में इनकी खेती की जाती है जिसमे उतराखंड में अधिकतम क्षेत्रफल (138.00 हजार हैक्टेयर) शामिल है। उत्तराखंड में मंडुवा (रागी) के अंतर्गत क्षेत्रफल, उत्पादन तथा उत्पादकता क्रमशः 89.00 हजार हैक्टेयर, 130.00 हजार टन एवं 1,459 किग्रा./हैक्टेयर है। वर्षा पर निर्भर इन परंपरागत फसलों को उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र

में अनादिकाल से उगाया जाता है क्योंकि ये फसलें विषम और दबावग्रस्त परिस्थितियों में भी सुनिश्चित उत्पादन की क्षमता रखती हैं। उत्तर भारत में उत्तराखण्ड अकेला ऐसा राज्य है जहाँ पर इन फसलों की खेती बहुतायत में होती हैं तथा इन का उपयोग अन्न व चारे हेतु घरेलू स्तर पर किया जाता है। इन फसलों से प्राप्त

- ज्यादातर कदन्न फसलें सीमांत भूमि पर न्यूनतम आदान आपूर्ति के साथ उगाए जाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप उत्पादकता कम होती है।
- कदन्न फसलों की कटाई उपरांत प्रबंधन एक बहुत ही कठिन प्रक्रिया है, जो इन फसलों के क्षेत्रफल में गिरावट का एक मुख्य कारण भी है।

तालिका–2 उत्तर–पश्चिमी हिमालयी राज्यों और अखिल भारतीय स्तर पर श्री अन्न फसलों का उत्पादन परिदृश्य

राज्य	फसल	क्षेत्र ('000 हैक्टेयर)	उत्पादन ('000 टन)	उपज (किग्रा. / हैक्टेयर)
उत्तराखंड	फिंगर मिलेट (रागी)	89	129.85	1459
	अन्य लघु कदन्न	49	71.00	1449
हिमाचल प्रदेश	फिंगर मिलेट (रागी)	0.58	0.490	842
	अन्य लघु कदन्न	2.41	2.34	972
जम्मू और कश्मीर	फिंगर मिलेट (रागी)	0.00	0.00	0.00
	अन्य लघु कदन्न	8.11	2.14	264.00
उत्तर–पश्चिमी हिमालय	फिंगर मिलेट (रागी)	89.58	130.34	1455.05
	अन्य लघु कदन्न	59.52	75.48	1268.25
अखिल भारतीय	फिंगर मिलेट (रागी)	1159.40	1998.36	1724.00
	अन्य लघु कदन्न	444.05	346.95	781.00

(स्रोतः अर्थशास्त्र और सांख्यिकी निदेशालय, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार, 2020–21)

चारा स्वादिष्ट एवं गुणवत्तायुक्त होता है जिससे पर्वतीय क्षेत्रों में पशुधन को भी बढ़ावा मिलता है। इसके अतिरिक्त ये फसलें मृदा एवं जल संरक्षण के लिये भी उपयोगी हैं। इसके अलावा प्राचीन समय से कदन्न फसलें (मंडुवा एवं मादिरा) उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों की परंपरागत मिश्रित कृषि पद्धति बारहनाजा का मुख्य घटक रही हैं। जिसका खाद्य, पोषण सुरक्षा एवं जैव–विविधता के संरक्षण में अमूल्य योगदान रहा हैं।

कदन्न फसलों की कम उत्पादकता के प्रमुख कारण

- किसानों द्वारा कम उपज देने वाली, ब्लॉस्ट रोग और गिरने के प्रति संवेदनशील पारंपरिक भू–प्रजातियों का अक्सर उपयोग किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप इन फसलों की उत्पादकता कम होती है।
- अन्य फसलों की तुलना में इन फसलों के व्यापार के लिए संगठित बाजार संरचनाओं की अनुपलब्धता है।
- स्वास्थ्य लाभों के बारे में प्रसंस्करणकर्ताओं और उपभोक्ताओं के बीच जागरूकता की कमी।
- उन्नत प्रजातियों के गुणवत्तापूर्ण बीजों की समय पर आपूर्ति न होना।

उत्तर-पश्चिम हिमालयी क्षेत्रों के लिए कदन्न फसलों की उन्नत प्रजातियाँ और उनकी विशेषताएँ

भाकृअनुप के विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा श्री अन्न फसलों में मुख्य रूप से मंडुवा और मादिरा की बहुत सी प्रजातियाँ (तालिका–3), जिनमें गुणवत्ता लक्षण, रोग और कीट प्रतिरोध तथा

अन्य कृषि संबंधी विशेषताएं आनुवंशिक सुधार के माध्यम से विकसित की गई हैं। ये उन्नत प्रजातियाँ उत्तर पश्चिमी हिमालयी राज्यों विशेष रूप से उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों के साथ ही देश के विभिन्न रागी एवं मादिरा उत्पादक राज्यों में व्यावसायिक रूप से उगाई जा रही हैं।

तालिका–3: उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों के लिए विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा विकसित की गई रागी (मंडुवा) एवं मादिरा (झंगोरा) फसलों की उन्नत तथा लोकप्रिय प्रजातियाँ

फसल	प्रजाति	प्रजाति की मुख्य विशेषताएं	चित्र
		मंडुवा	
1	वीएल मंडुवा 347	औसत उपज 2000–2200 किग्रा./हैक्टेयर, ग्रीवा और अँगुली झोंका रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी, परिपक्वता अवधि <100 दिन, दानों में प्रोटीन की मात्रा 9.47% और कैल्शियम 361 मिलीग्राम/100 ग्राम	
2.	वीएल मंडुवा 348	औसत उपज 2000–2200 किग्रा./हैक्टेयर, ग्रीवा और अँगुली झोंका रोग के लिए प्रतिरोधी, वर्षा आधारित जैविक खेती के लिए उपयुक्त	
3.	वीएल मंडुवा 352	औसत उपज 2500–2800 किग्रा./हैक्टेयर, कम अवधि के कारण आकस्मिक फसल योजना के लिए उपयुक्त।	
4.	वीएल मंडुवा 376	औसत उपज 2800–3000 किग्रा./हैक्टेयर, परिपक्वता अवधि 105–107 दिन, ग्रीवा और अँगुली झोंका रोग के लिए प्रतिरोधी।	

5.	वीएल मंडुवा 379	औसत उपज 2800–3200 किग्रा./हैक्टेयर, परिपक्वता अवधि 103–107 दिन, ग्रीवा और अँगुली झोंका रोग के लिए प्रतिरोधी।	
6.	वीएल मंडुवा 380	औसत उपज 1800–2000 किग्रा./हैक्टेयर, ग्रीवा और अँगुली झोंका रोग के लिए प्रतिरोधी, वर्षा आधारित जैविक खेती के लिए उपयुक्त।	
7.	वीएल मंडुवा 378	औसत उपज 2000–2200 किग्रा./हैक्टेयर, उच्च कैल्शियम (361 मिलीग्राम/100 ग्राम) और आयरन (4.5 मिलीग्राम/100 ग्राम), परिपक्वता अवधि 103–107 दिन, वर्षा आधारित जैविक खेती के लिए उपयुक्त।	
8.	वीएल मंडुवा 382	औसत उपज 2000–2200 किग्रा./हैक्टेयर, परिपक्वता अवधि 105–112 दिन, वर्षा आधारित जैविक खेती के लिए उपयुक्त, औसत परीक्षण वजन (2.34 ग्राम/1000 बीज) के साथ एक सफेद दाने वाली किस्म होने के कारण प्रसंस्करण उद्योग के लिए उपयुक्त, उच्च कैल्शियम (340 मिलीग्राम/100 ग्राम) और प्रोटीन की मात्रा (8.8%)	
9.	वीएल मंडुवा 400	औसत उपज 3100–3400 किग्रा./हैक्टेयर, परिपक्वता अवधि 100–102 दिन, कैल्शियम (361 मिलीग्राम/100 ग्राम) और लौह (4.5 मिलीग्राम/100 ग्राम) की मात्रा, पर्ण, ग्रीवा और अंगुली झोंका रोग के प्रति मध्यम प्रतिरोधी।	

मादिरा			
1.	वीएल मादिरा 172	औसत उपज 2000–2300 किग्रा./हैक्टेयर, दाने के कण्ड रोग के प्रति सहिष्णु।	
2.	वीएल मादिरा 207	औसत उपज 2200–2500 किग्रा./हैक्टेयर, परिपक्वता अवधि 90–95 दिन, उच्च फसल सूचकांक के साथ दाने के कण्ड रोग के प्रति सहिष्णु।	

श्री अन्न फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के लिए उन्नत उत्पादन पद्धतियां

उन्नत उत्पादन पद्धतियों का विकास उन्नत किस्मों के बीज, बुवाई के तरीकों, बीज दर, बीज उपचार, उर्वरकों के साथ–साथ खरपतवार और रोग/कीट नियंत्रण जैसे विभिन्न आदानों के प्रभावों को किसानों की खेती की पारंपरिक प्रथाओं के साथ तुलना करके किया जाता है। उत्तर–पश्चिमी हिमालय के अंतर्गत मंडुवा (रागी) तथा मादिरा (झंगोरा) की खेती के लिए उन्नत उत्पादन पद्धतियों का पैकेज तालिका–4 में दिया गया है।

तालिका–4: उत्तर–पश्चिमी हिमालय क्षेत्रों में श्री अन्न फसलों की खेती के लिए उन्नत उत्पादन पद्धतियां

क्र.सं.	विशेष	विवरण
1.	खेत का चयन और भूमि की तैयारी	• अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी खेती के लिये सबसे उपर्युक्त रहती है। • खेत की तैयारी के लिए पहले मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करके समतल करना चाहिये। • दूसरी जुताई से पहले एफवाईएम या कम्पोस्ट खाद को ठीक से मिट्टी में मिलाना चाहिये।
2.	बीज उपचार (खुराक के साथ अनुशंसित रसायन)	• कार्बेन्डाजिम या थाईरम 2–3 ग्राम/किग्रा. बीज। • **जैविक:** *ट्राइकोडर्मा हर्जियानम, स्यूडोमोनास फ्लोरसेंस* – 5 ग्राम/किग्रा. बीज।
3.	बुवाई का समय (इष्टतम बुवाई अवधि)	• मध्य मई से मध्य जून (पर्वतीय क्षेत्र) और जून–जुलाई (मैदानी क्षेत्र)
4.	बीज दर बोने की विधि	• 8–10 किग्रा./हैक्टेयर (सीधी बुआई) • 4–5 किग्रा./हैक्टेयर (रोपाई द्वारा – रागी के लिए) **पंक्ति बुवाई** • पंक्ति की दूरी: रागी के लिए 20 सेमी और बार्नयार्ड के लिए 25 सेमी। • पौधे से पौधे की दूरी – 7.5 से 10 सेमी.

5.	उर्वरक की खुराक और उर्वरक डालने का समय	**जैविकः** • एफवाईएम या कम्पोस्ट – 3.2 टन/एकड़ की दर से। **रासायनिकः** • एन.पी.के. – 40:20:20 किग्रा./हैक्टेयर (मंडुवा) • एन.पी.के. – 40:20:00 किग्रा./हैक्टेयर (मादिरा) • (50% नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश बेसल के रूप में, शेष 25% नत्रजन पहली निराई के समय और 25% फूल आने पर)
6.	**खरपतवार नियंत्रण**	• पहली निराई–गुड़ाई अंकुर निकलने के 20–25 दिनों के बाद और दूसरी निराई–गुड़ाई 30–35 के बाद **(जैविक खेती)** • आइसोप्रोटूरॉन 0.30 किग्रा. ए.आई./एकड़ पूर्व–उद्भव के रूप में (बुवाई के 24 घंटे के भीतर)
7.	**प्रमुख रोग और कीट नियंत्रण**	• **झौंका रोगः** मैंकोजेब दवा का 2.5 ग्राम/लीटर पानी या ट्राईसाइ. क्लाजोल 0.6 ग्राम./लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये। **(मंडुवा)**। • **हेल्मिंथोस्पोरियम पर्ण धब्बाः** मैंकोजेब दवा का 2.5 ग्राम/लीटर पानी की दर से रोग दिखने के तुरंत बाद छिड़काव करना चाहिये। **(झंगोरा)** • **कण्ड (ग्रेन स्मट):** कार्बेन्डाजिम के 0.1% घोल का छिड़काव पुष्पन के समय करना चाहिये। **(झंगोरा)** • **जैविक नियंत्रणः** *ट्राईकोडर्मा हर्जियानम* (5 ग्राम/किग्रा. बीज) से बीज उपचार और *स्यूडोमोनास फ्लोरसेंस* (0.5%) के दो छिड़काव खड़ी फसल में करने चाहिये।

श्री अन्न फसलों का कटाई उपरांत प्रबंधन

पर्वतीय क्षेत्रों में लघु कदन्न फसलों की कटाई उपरान्त प्रक्रियाएँ अक्सर पैर, हाथ या बैलों द्वारा की जाती हैं, जिसके लिए बहुत अधिक समय, श्रम, तथा धन की आवश्यकता होती है। इसके अलावा, कटाई के बाद के प्राथमिक प्रसंस्करण के इन पारंपरिक तरीकों से बीजों की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। मड़ाई मुख्य रूप से पर्वतीय क्षेत्रों में महिला किसानों द्वारा की जाती हैं, जिसके कारण महिलाओं को स्वास्थ्य संबंधी विकारों का भी सामना करना पड़ता है। किसानों की इस समस्या को हल करने के लिए भाकृअनुप – विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा "**विवेक मिलेट थ्रैशर–कम–पर्लर**" विकसित किया गया है। है। इस मशीन द्वारा मंडुवा में थ्रेशिंग और पर्लिंग के साथ–साथ झंगोरा में थ्रेशिंग, डी–हस्किंग और पॉलिश आदि भी की जा सकती है। इस मशीन की बनावट सरल है और वजन में हल्की (45 किग्रा.) होने से यह पर्वतीय क्षेत्रों में छोटे एवं सीमांत किसानों के लिये उपयुक्त है।

विवेक मिलेट थ्रैशर–कम–पर्लर

फसल कटाई के बाद पारंपरिक विधि की तुलना में मशीनीकृत विधि (विवेक मिलेट थ्रैशर–कम–पर्लर) द्वारा थ्रैशिंग, डी–हस्किंग और पर्लिंग की क्षमता अधिक पाई गई (तालिका–5)।

तालिका–5: पारंपरिक और मशीनीकृत थ्रैशिंग में कार्य कुशलता की तुलना

कटाई उपरान्त की जाने वाली क्रियाएँ	पारंपरिक	मशीनीकृत	पारंपरिक विधि की तुलना में दक्षता में वृद्धि (%)
थ्रैशिंग (किग्रा./घंटा) (फिंगर मिलेट और बार्नयार्ड मिलेट)	17.0	49.5	191
डी–हस्किंग (किग्रा./घंटा) (बार्नयार्ड मिलेट)	1.4	3.1	121
पर्लिंग (किग्रा./घंटा) (फिंगर मिलेट)	38.9	71.0	83

श्री अन्न फसलों के उत्पादन और उपभोग बढ़ाने के लिये रणनीतियाँ

❖ उन्नत किस्मों का विकास और प्रसार

- उच्च गुणवत्ता वाले लक्षणों, कम अवधि, प्रमुख रोगों और कीटों के प्रति प्रतिरोध और यांत्रिक कटाई के लिए अनुकूलित क्षेत्र विशिष्ट प्रजातियों का विकास करना।
- उन्नत किस्मों के गुणवत्तायुक्त बीजों की समय पर आपूर्ति सुनिश्चित करना।
- वृहद स्तर पर प्रक्षेत्र प्रदर्शनों के आयोजनो के माध्यम से अधिक उपज देने वाली उन्नत किस्मों तथा अन्य तकनीकों की श्रेष्ठता प्रदर्शित करना ताकि किसानों के खेतों तक इनका प्रसार कम से कम समय में हो सके।

❖ कटाई उपरांत श्री अन्न फसलों का उचित प्रबंधन

- कटाई के बाद काम आने वाली मशीनीकरण में सुधार तथा किसानों को उचित कीमत पर इनकी उपलब्धता को सुनिश्चित करना।

❖ उपभोक्ताओं में जागरूकता पैदा करना

- कदन्न अनाजों के स्वास्थ्य–लाभों के बारे में जनता, विशेष रूप से युवा पीढ़ी में जागरूकता पैदा करना इनके घरेलू खपत को बढ़ाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।
- सरकार द्वारा प्रायोजित योजनाओं जैसे स्कूली बच्चों के लिए मध्याह्न भोजन और आम लोगों के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) में कदन्न और उनके उत्पादों को शामिल करने से न केवल लोगों के स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार आयेगा बल्कि इससे कदन्न के उत्पादन बढ़ाने में भी मदद मिलेगी।

❖ श्री अन्न फसलों का मूल्य–वर्धन

- विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पादों के विकास से उपभोक्ताओं के विभिन्न वर्गों की बाजार मांगों को पूरा करने में मदद मिलेगी।

❖ नीतिगत प्रोत्साहन

- ऐसी नीतियों को लागू करना, जिससे बड़े निजी खाद्य प्रसंस्करणकर्ताओं द्वारा अपने उत्पाद पोर्टफोलियो में कदन्न अनाजों को जोड़ने के साथ ही उत्पादन स्थलों के पास प्रसंस्करण सुविधाओं की स्थापना को प्रोत्साहन मिल सकें।
- श्री अन्न आधारित स्टार्ट–अप्स को उद्यमिता विकास के लिए तकनीकी और वित्तीय सहायता प्रदान करना जिससे बाजार की माँग के अनुसार फसल कटाई मशीनीकरण, प्रसंस्करण और मूल्यवर्धन इकाइयों की स्थापना की जा सके।

हिन्दी का प्रश्न स्वराज का प्रश्न है।

–महात्मा गांधी

श्री अन्न (मंडुवा) की उन्नत प्रजाति का प्रदर्शन एवं प्रोन्नयन: एक कृषक सहभागी प्रयास

रेनू जेठी[1], कुशाग्रा जोशी[2], प्रतिभा जोशी[3] एवं रेनू सनवाल[2]

[1]भाकृअनुप-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल, उत्तराखंड

[2]भाकृअनुप-विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

[3]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

पोषक तत्वों के आधार पर पारंपरिक खाद्यान्न गेहूँ, चावल जैसे खाद्यान्नों से बेहतर होते हैं जिस कारण इन्हें पोषक अनाज भी कहा जाता है। भारत में रागी का उत्पादन मुख्यतः कर्नाटक, तमिलनाडु, उत्तराखण्ड, महाराष्ट्र एवं ओडिशा में होता है। पुराने समय में रागी को गरीबों का मुख्य भोजन माना जाता था परन्तु उच्च पोषण गुणों के कारण वर्तमान में यह अमीरों की थाली का भी मुख्य अंग बनता जा रहा है। पर्वतीय क्षेत्रों में पारंपरिक खाद्यान्न में रागी सबसे अधिक प्रचलित है। उत्तराखण्ड में रागी को मंडुवा के नाम से जाना जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में उपरांऊ भूमि में मंडुवा की खेती की जाती है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में अधिकाँश भूमि में असिंचित अवस्था में खेती की जाती है। मंडुवा की खेती हल्की क्षारीय, पर्वतीय क्षेत्रों में पायी जाने वाली कंकरीली, पथरीली और ढालू मृदाओं में की जा सकती है। अधिक उत्पादन हेतु अच्छी जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। सामान्यतः रागी खरीफ ऋतु की फसल है। मंडुवा मवेशियों के लिए सूखा चारा का भी उत्कृष्ट स्रोत है। पर्वतीय क्षेत्रों की मुख्य फसल होते हुए भी मंडुवा की उत्पादकता केवल 1500 किग्रा./हैक्टेयर है। इसका मुख्य कारण मिट्टी की कम उर्वरता, अनियमित वर्षा एवं कम लागत कृषि प्रणाली है। भारत में 60 के दशक में हरित क्रांति के दौरान गेहूँ व चावल जैसे खाद्यान्नों को तो बढ़ावा मिला, परन्तु पारंपरिक फसलों की अनदेखी हुई। इस कारण अधिकतर छोटे व सीमांत किसान पारंपरिक फसलों से दूर होते चले गए।

उच्च पोषण मान के कारण इसे 'न्यूट्री–अनाज' अथवा श्री अन्न की श्रेणी में रखा गया है। श्री अन्न के पोषण व स्वास्थ्य लाभ एवं निरंतर बदलती जलवायु परिस्थितयों में कृषि के लिए उनकी उपयोगिता एवं उत्पादन बढ़ाने हेतु वर्ष 2023 को 'अन्तराष्ट्रीय श्री अन्न वर्ष' के रूप में मनाया गया। आज भी अधिकतर कृषक जागरूकता की कमी के कारण परंपरागत कम उपज वाली प्रजातियों का उपयोग कर रहे हैं, जबकि विभिन्न शोध संस्थानों द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों हेतु उन्नत मंडुवा की किस्में विकसित की गईं।

पर्वतीय क्षेत्रों हेतु विकसित मंडुवा की उन्नत प्रजातियां

वीएल मंडुवा 149, वीएल मंडुवा 315, वीएल मंडुवा 324, वीएल मंडुवा 347, वीएल मंडुवा 348, वीएल मंडुवा 376, वीएल मंडुवा 379, वीएल मंडुवा 380, वीएल मंडुवा 378, वीएल मंडुवा 382 पर्वतीय क्षेत्र के लिए संस्तुत प्रजातियाँ हैं। मंडुवा की प्रजाति वीएल मंडुवा 382 सफेद रंग की है जिसकी रोटी का रंग भूरे की बजाय सफेद है। इस प्रजाति में भूरे रंग की प्रजाति वीएल मंडुवा 324 की तुलना में अधिक कैल्शियम और प्रोटीन पाया गया है। मंडुवा की यह विकसित प्रजातियां उत्तराखण्ड के जैविक और वर्षा आधारित पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं। इन विकसित किस्मों की बुवाई मई–जून के महीने में की जाती है। मंडुवा को शुष्क मौसम मे भी उगाया जा सकता है। यह गंभीर सूखे की स्थिति का सामना करने में भी सक्षम है।

महिलाओं ने अपनायी उन्नत मंडुवा प्रजाति

पिथौरागढ़ जिले के बिठौली गॉव में महिलाओं की सक्रिय सहभागिता से मंडुवा की उन्नत प्रजाति वी एल मंडुवा 376 एवं वीएल मंडुवा 379 का अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन एवं मूल्यांकन किया गया। विश्लेषण में यह पाया गया कि वीएल मंडुवा 376 की पैदावार 1800 किग्रा./हैक्टेयर पायी गयी, जो कि पारंपरिक मंडुवा की किस्म से 71.4 प्रतिशत अधिक थी। इसी तरह वीएल मंडुवा 379 की पैदावार 1783 किग्रा./हैक्टेयर पाई गई जो पारंपरिक मंडुवा की किस्म से 69.8 प्रतिशत अधिक थी। इसी प्रकार वर्ष 2019 के दौरान उन्नत मंडुवा प्रजाति वीएल मंडुवा 352 का एक हैक्टेयर क्षेत्रफल में प्रदर्शन किया गया। इस क्षेत्र की महिलाओं ने इस प्रजाति को उत्पादकता के अलावा अन्य विशेषताओं मे भी जैसे बाली का आकार, बीज का आकार, बीज का रंग, पौधे की ऊँचाई, स्वाद और परिपक्वता में वरीयता स्कोर अधिक प्रदान किया। उन्नत प्रजातियों के प्रदर्शन से यह प्रमाणित होता है कि उन्नत प्रजातियों को कृषक महिलाओं ने अधिक पसंद किया।

पौष्टिक महत्व व स्वास्थ्य लाभ

मंडुवा में 364 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम कैल्शियम पाया जाता है इसलिए यह हड्डियों को मजबूत रखने व हड्डियों के विकास में लाभदायक होता है। शोध में यह पाया गया है कि पर्वतीय क्षेत्रों में अधिकतर महिलाऐं हड्डियों से संबंधित बीमारियों से ग्रसित है। इसी प्रकार महिलाओं में अधिकतर लौह तत्व (आयरन) की कमी पायी जाती है। मंडुवा लौह तत्व का भी उत्तम स्रोत है। अंकुरित मंडुवा में 'विटामिन सी' भी पाया जाता है जो लौह तत्व के अवशोषण को बढ़ाता है। अंकुरित मंडुवा का आटा या मंडुवा के माल्ट को खाने से आयरन की जैव उपलब्धता बढ़ जाती है जो एनीमिया के उपचार में मदद करता है। मंडुवा में मौजूद रेशे की उच्च मात्रा कोलेस्ट्रॉल से संबधित बीमारियों को नियंत्रित करने में सहायक होता है। प्रोटीन की प्रचुर मात्रा के कारण मंडुवा का सेवन शारीरिक विकास में मदद करता है और प्रतिरक्षा तंत्र को भी मजबूत करता है। इसमें ग्लूटेन मौजूद नहीं होता जिस कारण मधुमेह के रोगियों के लिए यह उत्तम है।

उन्नत प्रजातियों के प्रचार–प्रसार से पर्वतीय क्षेत्रों में मंडुवा जैसी मुख्य फसल का उत्पादन बढ़ेगा और कृषकों को लाभ प्राप्त होगा। मंडुवा के पोषण गुणों की जागरूकता बढ़ने से उत्पादन क्षेत्रों का विस्तार भी होगा।

महिलाओं की सक्रिय सहभागिता से मंडुवा की उन्नत प्रजाति प्रदर्शन

श्री अन्न फसलों के हानिकारक कीट एवं उनका नियंत्रण

अमित पश्चापुर, जयप्रकाश गुप्ता, सनाउल्लहा बट एवं नूतन कार्की
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

पर्वतीय क्षेत्रों में उगाई जाने वाले कदन्न में कई कीटों का आक्रमण होता है जिनमें कुरमुला, तना बेधक कीट, मादिरा में प्ररोह मक्खी, तथा रामदाना में पर्णजालक कीट प्रमुख हैं। यदि समय पर इन कीटों की रोकथाम के उपाय न किये जायें, तो फसल को बहुत हानि उठानी पड़ती है। अतः कीटों की पहचान एवं समय पर इनकी रोकथाम करना अति आवश्यक है।

कदन्न फसलों के प्रमुख कीट

तना बेधक (स्टेम बोरर) कीटः यह मंडुवा का एक प्रमुख कीट है, इसकी अनेक प्रजातियां पायी जाती हैं परन्तु पर्वतीय क्षेत्रों में गुलाबी तना बेधक (*सिसेमिया इन्फरेंस*) प्रमुख है। वयस्क कीट एक पतंगा होता है जिसकी सूंडियों द्वारा फसल को हानि पहुंचायी जाती है। पौधे की किसी भी अवस्था में इसका प्रकोप हो सकता

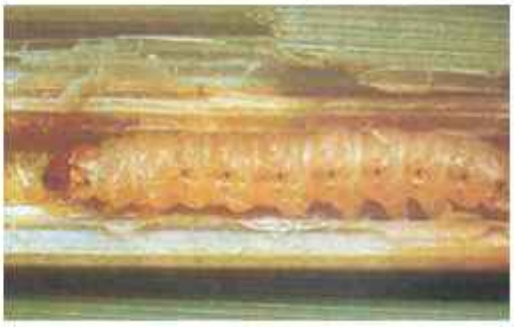

सूंडी

है। सूंडियां तने में छेद करके उसके भीतरी भाग को खा जाती हैं। प्रारम्भिक अवस्था में आक्रमण होने पर कल्ले सूख जाते हैं तथा यह "मृतगोभ" कहलाते हैं। यदि आक्रमण बालियां निकलने से पहले हो, तो दाने रहित सफेद बालियां निकलती हैं।

प्रबंधन

तना बेधक रोधी प्रजातियों को उगाना चाहिये। कीट लगने वाले स्थानों में रासायनिक नियन्त्रण हेतु इकॉलक्स 25 ई.सी. (क्वीनालफॉस) अथवा डर्सबान 25 ई.सी. (क्लोरपाइरिफॉस) 2 मिली. दवा का 1 लीटर पानी में घोल या न्यूवाकॉन (मोनोक्रोटोफॉस 40 ई.सी.) के 1 मिली. को 1 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना लाभकारी रहता है। एक नाली खेत के लिये लगभग 15 लीटर पानी में बनी दवा पर्याप्त रहती है।

प्ररोह मक्खी (*एथेरीगोना* प्रजाति)

यह एक अत्यन्त छोटे आकार की मक्खी होती है जिसके शिशु या मैगट फसल को हानि पहुँचाते हैं। ये पौधों की प्रारंभिक अवस्था में मध्य प्ररोह में घुसकर उसके भीतरी भाग को खा जाते हैं। यह लक्षण डेड हार्ट कहलाता है।

प्रबंधन

इस कीट का आक्रमण मंडुवा और मादिरा में बहुत अधिक पाया जाता है। पौधे उगने के पश्चात् यदि 25–30 दिन तक फसल को बचा लिया जाये, तो इसके बाद इस कीट का आक्रमण नहीं होता है। फिश मील ट्रैप 2/नाली की दर से फसल बुआई से 30 दिनों तक खेतों में प्रयोग करें। रासायनिक नियंत्रण के अन्तर्गत थायोमिथाक्साम 30 प्रतिशत एफ.एस की 4.0 मिली./किग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोने से इस कीट का आक्रमण कम होता है। फर्टेरा 0.4 प्रतिशत की 2–3 ग्राम/पौधे की दर से पौधों के पर्णचक्र में डालकर प्ररोह मक्खी को नियंत्रित किया जा सकता है।

प्ररोह मक्खी

कटुआ कीट

कदन्न फसलों का एक प्रमुख कीट कटुआ कीट भी होता है जो काले व मटमैले रंग का होता है। इसकी सूंडी ही नुकसानदायक होती है जो पौधों को भूमि की सतह से काटकर गिरा देती है। इसकी सूंडी दिन के समय मिट्टी के ढेलों या खेत में पड़े कूड़ा करकट के नीचे छिपती है तथा रात में पौधों को काटती है तथा कटे भाग को खींचकर छुपने के स्थान तक ले जाने का प्रयास करती है।

प्रबंधन

इसके नियन्त्रण के लिए ढेलों के नीचे छिपे सूंडी को नष्ट कर देना चाहिए तथा साथ ही प्रकाश प्रपंच

वयस्क पतंगा सूंडी

का प्रयोग करके कटुआ कीट के वयस्क पतंगों को नियन्त्रित कर सकते हैं। यदि इनका प्रकोप खेत में दिखाई पड़े, तो 3–5 मीटर की दूरी पर खेत में सूखी घास का छोटा ढेर जगह–जगह रख देना चाहिए। रात में पौधों को काटने के बाद ये सूंडी इसी ढेर में छुप जाती है। सुबह के समय इन घासों को हटाने पर नीचे सूंडी दिखाई देती है जिसे नष्ट कर देना चाहिए। बीज बुवाई के पूर्व इमिडाक्लोप्रिड 70ws दवा की 5 ग्राम मात्रा प्रति किलोग्राम बीज की दर से शोधन करना चाहिए या क्लोरपायरीफॉस 10 जी की 400 ग्राम मात्रा प्रतिनाली की दर से खेत में मिला देना चाहिए।

कुरमुला

यह कीट पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग सभी फसलों को हानि पहुँचाता है। इसका वयस्क भृंग होता है, जो भूरे,

हरे, सफेद भूरा इत्यादि रंग का होता है। इनके वयस्क जून से अक्टूबर महीने तक प्रकाश में आते हैं। ये अपने अण्डे जमीन में देते हैं। अण्डों से निकलकर इनके गिडार फसलों की जड़ों अथवा अन्य कार्बनिक पदार्थों को खाते हैं। इनके गिडार अक्टूबर महीने तक फसलों को ज्यादा हानि पहुँचाते हैं। ज्यादा ठंड पड़ने पर ये जमीन में काफी नीचे लगभग 30 से 100 सेमी. नीचे चले जाते हैं। पुनः मार्च–अप्रैल के महीने में मौसम अनुकूल होने पर ऊपर की ओर आते हैं। इस बीच इनकी प्यूपा अवस्था जमीन में ही बनती है। जून–जुलाई में वयस्क बनकर बाहर निकलते हैं एवं वृक्षों तथा फसलों को अपना शिकार बनाते हैं।

वयस्क भृंग

कुरमुला (गिडार)

प्रबंधन

- मार्च–अप्रैल के महीने में परती जमीन की गहरी जुताई करनी चाहिए, जिससे उसमें पल रहे कुरमुला कीट की विभिन्न अवस्थाएं सूर्य के प्रकाश से प्रभावित हो सकें अथवा परभक्षियों द्वारा उनका भक्षण हो सके।
- सड़ी गोबर की खाद का प्रयोग करें। कच्ची गोबर की खाद का प्रयोग करने से कुरमुला का प्रकोप बढ़ता है।
- रात्रि के समय गुबरैले अपनी रुचि के पोषक वृक्षों पर एकत्रित होते हैं। अतः 8 से 10 बजे तक इन पेड़ों की टहनियों को डंडे से हिलाकर गुबरैलों को एकत्रित करके मिट्टी तेल मिले पानी में डाल देना चाहिए।
- कुरमुलों के वयस्क जब पोषक पौधों पर ज्यादा आने लगें तो ऐसी अवस्था में कार्बेरिल 50 डब्लू पी नामक कीटनाशी का 2 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव करें।

वीएल प्रकाश प्रपंच

बैसिलस सिरियस पाउडर

- प्रकाश प्रपंच वयस्क गुबरैलों के विनाश के लिए विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा वीएल कुरमुला ट्रैप नामक प्रकाश प्रपंच बनाया गया है। इसके द्वारा वयस्कों को आकर्षित करके प्रचुर मात्रा में मार सकते हैं।
- बुवाई के समय इमिडाक्लोप्रिड से बीजोपचार करें। इससे कुरमुले के साथ–साथ अन्य कीटों का प्रकोप भी कम होता है।
- जैवकीटनाशी का प्रयोग कुरमुलों में होने वाली विभिन्न बीमारियों की पहचान संस्थान द्वारा की गयी है। इनमें से एक अत्यन्त प्रभावशाली जीवाणु को पाउडर के रुप में तैयार किया गया है। यह जीवाणु *बैसिलस सिरियस* स्ट्रेन डब्लू.जी.पी.एस. बी.–2, कुरमुलों को आसानी से नियंत्रित कर लेता है। इसके पाउडर को गोबर की खाद में मिलाकर खेतों में डाल देने से लम्बे अवधि के लिए कुरमुला नियंत्रित हो जाता है।
- कुरमुलों के गिडारों के नियत्रंण हेतु क्लोरपाइरीफॉस 10 जी की 20 किग्रा./है. अथवा 400 ग्राम/प्रति नाली की दर से अथवा क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. की 4 लीटर प्रति हैक्टेयर मात्रा को 40 किग्रा. भुरभुरी मिट्टी या राख या 80 मिली प्रति नाली मात्रा को 1 किग्रा. भुरभुरी मिट्टी या राख में मिलाकर जुलाई के प्रथम पखवाड़े में बुरकाव करना चाहिए। यदि यह संभव न हो, तो फोरेट 10 जी की 25 किग्रा. प्रति हैक्टेयर अथवा आधा किग्रा. प्रति नाली की दर से दानों को जुलाई के प्रथम पखवाड़े में निराई–गुड़ाई करने के बाद मिट्टी में मिला दें। परन्तु इसके प्रयोग के एक महीने बाद तक खेत की घास को पशुओं को न खिलाएं।

टिड्डे (*पतंगा सक्सिकटा, हिरोग्लाइफस बैनियान,* आदि)

यह हरे अथवा भूरे रंग का सर्वहारी कीट है। ये अपने अंडे ज्यादातर भूमि में अथवा मेड़ों पर देते हैं। इनकी मादा अंडे देते समय एक विशेष प्रकार के द्रव्य का स्राव करती है जिससे कैप्सूल रूपी संरचना बनती है। इनके शिशु व वयस्क दोनों ही पत्तियों को खाकर क्षति पहुंचाते हैं।

प्रबंधन

गर्मी में गहरी जुताई करने से इनके अंडे सूर्य के प्रकाश से नष्ट हो जाते हैं। मेड़ों की छटाई करने से इनके अंडे उपर दिखने लगते हैं जिन्हें पक्षी व परभक्षी खा लेते हैं। ज्यादा प्रकोप होने पर मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल का 20 किग्रा./है. की दर से बुरकाव करें।

रामदाना के प्रमुख कीट

पर्णजालक कीट

हाइमीनिया रिकरवेलिस नामक कीट से रामदाना की फसल को सबसे ज्यादा हानि होती है। यह कीट विश्व के अनेक देशों में भी पाया जाता है। भारतवर्ष में यह कीट रामदाना के अतिरिक्त सोयाबीन, मूंग, राजमाश, पालक, चुकन्दर, इत्यादि फसलों को भी हानि पहुँचाता है। इस कीट का वयस्क गाढ़े रंग की तितली होती है जिसके पंख पर सफेद रंग की लहरदार धारियां होती हैं। इसकी मादा एक–एक करके अपने 4–5 दिनों के जीवन काल में लगभग 150 अण्डे पत्तियों की शिराओं के गढ्ढों के आसपास देती हैं। शुरूआत में सूंडियों का रंग चमकदार हरा होता है जिनका सिर हल्के भूरे रंग का होता है। ये सूंडिया शुरूआत से ही पत्तियों के हरे भाग क्लोरोफिल को खाती हैं और जैसे–जैसे बड़ी होती हैं, पत्तियों को जाल जैसा बना देती हैं तथा उन पत्तियों को अपने मुंह से निकाले गये लार द्वारा आपस में जोड़ देती हैं। सूंडिया इनके अन्दर छिपकर पत्तियों को खाती रहती हैं, जिससे पत्तियों पर बना सफेद जाल खेत में दूर से ही स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगता है।

तना विविल

गैस्टरोक्लिसस औरिकुलेटस नामक कीट से कभी–कभी रामदाना के पौधों को अत्यधिक हानि पहुँचती है। यह कीट गहरे रंग का होता है एवं इसका शरीर पतला लम्बा होता है। वक्ष एवं उदर की अपेक्षा कीट का सिर आगे से पतला एवं नुकीला होता है। इस कीट के भृंगक तने के अन्दर ही अन्दर छेद बनाते हैं एवं आन्तरिक ऊतकों को खाकर खत्म कर देते हैं, फलस्वरूप पौधे सूखने लगते हैं।

तम्बाकू की सूंडी (स्वार्मिंग कैटरपिलर)

रामदाना के पौधों पर समय–समय पर *स्पोडोप्टेरा लिटुरा* कीट का भी अत्यधिक प्रकोप देखा गया है। यह

कीट भारत वर्ष में रामदाना के अतिरिक्त अनेक फसलों, जैसे तम्बाकू, टमाटर, मिर्च, मूंगफली, सोयाबीन, गोभी, इत्यादि को भी भारी नुकसान पहुँचाता है। इस कीट का वयस्क तितली होती है। इसके वयस्क के अगले पंखों का रंग गहरा होता है जिस पर लहरदार सफेद रंग के धब्बे होते हैं, तथा पिछले पंखों का रंग सफेद एवं किनारा भूरे रंग का होता है। वयस्क मादा पत्तियों की निचली सतह पर झुण्ड में अण्डे देती है। अण्डे भूरे रंग के बालों से ढके हुए दिखाई पड़ते हैं। लगभग 4–5 दिनों बाद अण्डों से सूंडियां निकलती हैं, जो पत्तियों को खाना शुरू कर देती हैं। लगभग 15–20 दिनों में सूंडियां पूर्ण विकसित हो जाती हैं। पूर्ण विकसित सूंडियों का रंग हल्का हरा भूरा होता है जिस पर गहरे रंग की लाइनें दिखती हैं। इस कीट का कुल जीवन चक्र 30–40 दिनों का होता है।

रामदाना में कीटों का प्रबन्धन

रामदाना के कीटों के प्रबन्धन हेतु समेकित कीट प्रबन्धन रणनीति अपनानी चाहिये, जिससे नाशीकीट एवं उनके भक्षक अथवा शोषक कीटों के प्राकृतिक सामंजस्य में बदलाव कम से कम अथवा न आये। इसके लिये हमें निम्नांकित क्रियाकलापों को अपनाना चाहियेः

- जिन क्षेत्रों में कीटों का अधिक प्रकोप होता हो, वहाँ रबी की फसल कटाई उपरान्त गर्मी के दिनों में खेत की गहरी जुताई करके कुछ दिनों के लिए छोड़ दें, जिससे मिट्टी में पल रहे पर्ण जालक कीट, तम्बाकू सूंडी, इत्यादि के प्यूपा सूर्य के प्रकाश में नष्ट हो जायें अथवा परभक्षी पक्षियों द्वारा उनका भक्षण हो सके, तदुपरान्त बुवाई करें।
- कीटों के अत्यधिक प्रकोप वाले क्षेत्रों में फसल का बदलाव करें।
- फसल कटाई के बाद खेत की पूर्ण रूप से सफाई करें दें ताकि उसमें पल रहे कीट अगली फसल पर न जायें।
- ज्यादा घनी बुवाई न करें। कतारों की दूरी 50 सेमी. के करीब रखें।
- कीटप्रकाश प्रपंच का प्रयोग करें। चूंकि पर्णजालक कीट अल्ट्रावाइलेट यू.वी. प्रकाश की ओर अधिक आकर्षित होते हैं। अतः कीट पकड़ने वाले प्रकाश प्रपंच में यू.वी. ट्यूब लाइटों का प्रयोग करके इन कीटों के वयस्कों को ज्यादा संख्या में पकड़कर नष्ट किया जा सकता है।
- नीम गिरी चूर्ण के 5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। यदि नीम गिरी उपलब्ध न हो तो बाजार में उपलब्ध नीम आधारित कीटनाशी दवाओं का प्रयोग कर सकते हैं।
- पत्तियों को खाने वाली सूंडियों के लिए मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल अथवा क्लोरपाइरिफॉस 1.5 प्रतिशत धूल का 500–600 **ग्राम/नाली** अथवा 25–30 **किग्रा./हैक्टेयर** की दर से बुरकाव करें।
- सूंडियों एवं भृगों से सुरक्षा के लिए क्विनालफॉस (25 ई.सी.) या इण्डोसल्फान (35 ई.सी.) दवा का 2 **मिली./लीटर** अथवा मैलाथियान (50 ई.सी.) दवा का 1 **मिली./लीटर** अथवा डेल्टामेथ्रिन (2.8 ई.सी.) दवा का 0.5 **मिली./लीटर** की दर से छिड़काव करें। किसी भी प्रकार की दवा के छिड़काव के समय मुँह पर पट्टी अवश्य बाँधें। एक नाली खेत में छिड़काव के लिये लगभग 20 लीटर पानी में वांछित दवा मिलाकर घोल बनायें।
- तितली जाति के कीटों के नियंत्रण के लिए जैव कीटनाशी *बैसिलस थूरिन्जिएन्सिस* का एक किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- प्रकृति में विभिन्न प्रकार के परजीवी कीट पाये जाते हैं, जो नाशीकीटों का शोषण अथवा भक्षण करके नष्ट कर देते हैं। अतः पर्णजालक कीटों के लिए इसके परजीवी कीट (*एपेन्टेलिस डेल्हिऐन्सिस* तथा *कार्डिओकाइल्स* प्रजाति) एवं तम्बाकू सूंडी के लिए भी अन्य परजीवी कीटों (*टेलिनोमस रेमस, केम्पोलेटिस क्लोरिडि, टेट्रास्टिकस इसराइली, कैन्थिकोना फार्सिलाटा* एवं *ट्राइकोग्रामा* प्रजाति इत्यादि) को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। इसके लिए रासायनिक दवाओं का प्रयोग उचित मात्रा में करना चाहिये जिससे जैविक नियन्त्रण करने वाले कीटों पर इनका दुष्प्रभाव कम से कम पड़े।

श्री अन्न फसलों के लिए विपणन की रणनीति

कुशाग्रा जोशी[1], रेनू जेठी[2] एवं मनीषा आर्या[3]

[1]भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

[2]भाकृअनुप-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल, उत्तराखंड

[3]कृषि विज्ञान केन्द्र, चिन्यालीसौड़, उत्तरकाशी, उत्तराखंड

सीमांत कृषि उत्पादन क्षेत्रों में श्री अन्न के संवर्धन से ग्रामीण लोगों द्वारा पौष्टिक भोजन की उपलब्धता और पहुंच में सुधार हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में उनका संवर्धन नई मूल्य श्रृंखलाओं के विकास के माध्यम से ग्रामीण आर्थिक विकास के अवसर भी पैदा कर सकता है। श्री अन्न के विपणन विकास से उनका निरंतर उपयोग बढ़ेगा और स्थानीय उत्पादकों और श्रृंखला इकाई के लिए यह टिकाऊ आय पैदा कर सकता है।

श्री अन्न मानव जाति को ज्ञात सबसे प्राचीन खाद्य पदार्थ है। इनके लिए यह अनमुान है कि इनकी खेती 8000 ई.पू. से की जा रही है। श्री अन्न परंपरागत रूप से विश्व के शुष्क और अर्द्धशुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लोगों के लिए आय, आहारीय ऊर्जा (प्रमुख भोजन के रूप में), तथा प्रोटीन का मुख्य स्रोत रहे हैं। श्री अन्न के प्रमुख प्रकारों में ज्वार, बाजरा, और रागी/मंडुवा शामिल हैं, तथा गौण प्रकारों में कंगनी, चीना, कोदो, साँवा/झंगोरा, कुटकी, और दो छद्म–श्री अन्न–कुट्टू और चौलाई शामिल हैं। श्री अन्न फसलें सूखे और गर्मी तनाव प्रति सहिष्णु हैं, कीटों और रोगों के लिए प्रतिरोधी हैं, और अर्ध–शुष्क और शुष्क वातावरण के लिए अनुकूल हैं। इसके अलावा, अधिकांश श्री अन्न फसलें पोषक तत्व युक्त हैं और आहार में विविधता लाने और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने में उपयोगी हो सकती हैं।

नीति निर्माताओं और जनता के बीच पिछले 5–10 वर्षों में भोजन की गुणवत्ता के साथ–साथ विविध स्रोतों से खाद्य पदार्थ की गुणवत्ता के संबंध में दृष्टिकोण में बदलाव देखा जा रहा है। हाल ही में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने सर्वसम्मति से 2023 को 'अंतर्राष्ट्रीय कदन्न वर्ष' के रूप में चिह्नित करने के लिए बांग्लादेश, केन्या, नेपाल, नाइजीरिया, रूस और सेनेगल के साथ भारत द्वारा शुरू किए गए एक प्रस्ताव को अपनाया। इस कदम से श्री अन्न पर वैश्विक ध्यान आकर्षित करने में मदद मिलेगी, जो पोषण और पारिस्थितिक रूप से आवश्यक है और लाभकारी पारंपरिक फसल मानी जाती है। एक बड़ी जनसँख्या ने स्वास्थ्य–संबंधी कारणों एवं वजन घटाने के लिए श्री अन्न का सेवन शुरू किया है। युवाओं में स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता से श्री अन्न में उपभोक्ताओं की रुचि बढ़ रही है। ऐसे में कृषकों को भी कारगर विपणन रणनीति जानने की आवश्यकता है ताकि वे श्री अन्न फसलों का उत्पादन कर इनके विपणन से लाभ कमा सकें।

विपणन की रणनीति

बाजार तक पहुँच किसी भी कृषि उत्पाद के विपणन के लिए आवश्यक है, परन्तु श्री अन्न फसलों की भारत में बाजार तक पहुँच भली प्रकार विकसित नहीं हो पाई है। इन फसलों के विपणन हेतु प्रायः रणनीति बनाने की आवश्यकता है, जैसे i) श्री अन्न फसलों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि करना ii) इन फसलों की माँग में वृद्धि लाना तथा iii) विपणन रणनीति को मजबूत करना।

आइए, हम इन बिन्दुओं पर चर्चा करते हैं:–

i) **उत्पादन क्षमता को बढ़ाना:–** श्री अन्न फसलों की कम उपज तथा उत्पादन का मुख्य कारण है, इन फसलों की उन्नत उत्पादन तकनीकी का किसानों द्वारा अंगीकरण न करना। उत्पादन क्षमता बढ़ाने के कुछ तरीके इस प्रकार हैं:–

गुणवत्तायुक्त बीज उत्पादन में सहायता, छोटे एवं सीमांत किसानों को वित्तीय सहायता, श्री अन्न फसलों का प्रासंगिक मूल्य पर खरीद का आयोजन, ऐसी विपणन पहलों का सृजन करना जिनमें कृषकों को आय का उच्च हिस्सा प्राप्त हो, इसके अतिरिक्त कृषकों के खेत में उन्नत

उत्पादन तकनीकी के साथ श्री अन्न फसलों के प्रदर्शन एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम के माध्यम से श्री अन्न फसलों के विकास के प्रयास आवश्यक हैं। यह कम उपज वाली स्थानीय किस्मों को बदलने तथा कृषकों के मध्य उन्नत किस्मों को लोकप्रिय बनाने में मदद करेंगी।

ii) **माँग को बढ़ावा देना:**– श्री अन्न फसलों की माँग में वृद्धि करने के समय सबसे बड़ी चुनौती है, श्री अन्न फसलों के गुणों के बारे में आम जन में जागरूकता की कमी। इन फसलों की माँग में विस्तार इनके प्रचार–प्रसार के माध्यम से किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, इन फसलों के स्वास्थ्य लाभों के प्रति जागरूकता मीडिया के माध्यम से प्रमोशन/प्रचार अभियानों के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।

iii) **विपणन सम्पर्कों को मजबूत करना:**– एक सफल बाजार श्रृंखला वह है, जो बाजार में एक संतोषजनक गुणवत्तायुक्त उत्पाद को एक उचित मूल्य पर लाने में सक्षम हो। श्री अन्न फसलों के लिए बाजार को मजबूत करने के लिए विभिन्न रणनीतियों की आवश्यकता होती है।

विपणन मिश्र / मार्केटिंग मिक्स का प्रयोग

विपणन मिक्स से अभिप्राय है कि कृषक/उत्पादक या संगठन अपने उत्पादों को बेचने का प्रस्ताव कैसे करता है। विपणन मिक्स एकत्र करना विपणन कार्य का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

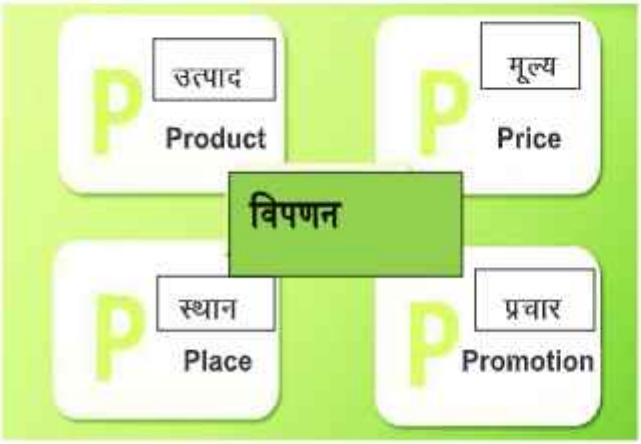

विपणन के चार स्तम्भ

विपणन मिक्स के चार स्तम्भ हैं (4 Ps ऑफ मार्केटिंग):

i) **उत्पाद:** आप क्या बेचते हैं। इसका मतलब यह समझना है कि प्रतियोगियों से अलग खड़े होने और ग्राहकों पर जीत हासिल करने के लिए आपके प्रस्ताव की क्या जरूरत है। दूसरे शब्दों में, 'क्या' आपके उत्पाद को इतना अद्वितीय बनाता है। उत्पाद पर विचार करने के अनेक तरीके हैं। इसके लिए आपको सबसे पहले समझना होगा कि आपके क्षेत्र या बाजार में श्री अन्न फसलों के किस उत्पाद की मांग है। इसके लिए बाजार का सर्वे करना आवश्यक है तथा एक रूपरेखा बनाने की आवश्यकता है कि अपने फसल को आप किस उत्पाद के रूप में बेचना चाहेंगे। इसके लिए भी आपको आवश्यकता है यह देखने की:

- आपके पास उस उत्पाद को बनाने के लिए पर्याप्त संसाधन है ?
- क्या आपको उस उत्पाद के निर्माण का कौशल है?
- उस उत्पाद को बनाने के लिए अगर आपको किसी संरचना या ढांचे की आवश्यकता है, तो उसके निर्माण के लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था है?
- अगर नहीं, तो आपको वह राशि किस प्रकार प्राप्त हो सकती है?
- उत्पाद के प्रसंस्करण के लिए मुख्य तकनीकी कहाँ से प्राप्त होगी तथा उसके लिए खर्च कहाँ से किया जाएगा?

सम्पूर्ण रूप से देखें तो हमें इसके लिए एक बिज़नेस प्लान की आवश्यकता होती है।

ii) **मूल्य:** मूल्य सरल शब्दों में यह इस बात को संदर्भित करता है कि आप अपने उत्पाद के लिए कितना शुल्क लेते हैं। हालांकि यह समझने के लिए सरल है, पर वास्तव में सही कीमत निश्चित करना मुश्किल काम है। इसमें मूल्य इस तरह निर्धारित करना होता है, ताकि लाभ भी हो तथा क्रेता इस मूल्य को देने पर राज़ी भी हों। कुछ सवाल आपको अपने आप से पूछने चाहिए:–

- सबसे कम कीमत क्या होगी जिसे आप अपने उत्पाद को बेचने के लिए तैयार हैं?
- उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण से इसकी उच्चतम कीमत क्या होगी?
- कीमत के प्रति आपके ग्राहक कितने संवेदनशील हैं?
- आपके द्वारा तय कीमत प्रतिस्पर्धा की तुलना कैसे करती है?

iii) **स्थान:** आप अपने उत्पाद को कहाँ बढ़ावा देते हैं? आपको एक स्थान चुनना होगा जहां आपके लक्षित ग्राहक हैं। उनसे उम्मीद न करें कि वे आपके पास आएँ, आपको उनके पास जाना होगा। यहाँ अपने आप से पूछने के लिए कुछ सरल सवाल दिए गए हैं ताकि आप सही जगह पा सकें।

- आपका ग्राहक कहाँ है?
- कौन से आउटलेट (ऑनलाइन और ऑफलाइन) आपके उत्पाद को बेचते हैं?
- वर्तमान में आपके लिए कौन से वितरण चैनल काम कर रहे हैं?
- क्या आप अपने उत्पाद सीधे व्यवसायों या उपभोक्ताओं को बेचते हैं?
- क्या आप अपने उत्पाद सीधे अपने अन्तिम ग्राहक को बेचते हैं या आपको बिचौलियों से गुजरना पड़ता है?
- आपके प्रतिस्पर्धी कहाँ हैं?

iv) **प्रचार** : इसका अर्थ है कि आप अपने उत्पाद को अच्छी तरह से कैसे बढ़ावा देते हैं। आपके ग्राहकों को आपके उत्पाद के बारे में कैसे पता चलता है? आप किन रणनीतियों का उपयोग करते हैं, और क्या वे प्रभावी हैं? इसके लिए आप अपने आप से निम्नलिखित प्रश्न पूछ सकते हैं–

- आपके क्रेता जानकारी का उपभोग करने के लिए किन चैनलों का सबसे अधिक उपयोग करते हैं?
- आपके समाधानों को बढ़ावा देते समय किस तरह का संदेश अधिक प्रभावी होता है?
- आपके उत्पाद को बढ़ावा देने के लिए आदर्श अवधि क्या है? क्या मौसम को लेकर कोई चिंता है?
- आपके प्रतिस्पर्धी कैसे योजना बनाते हैं और उनके प्रचार को पूरा करते हैं?

विपणन चैनलों का चुनाव

श्री अन्न फसलों के लिए सबसे आम विपणन चैनलों में से कुछ हैं:

- सीधे क्रेताओं को अपना उत्पाद बेचना: इसका तात्पर्य बिचौलियों का उपयोग करने के बजाय ग्राहकों के साथ सीधे व्यवहार करके उत्पाद को बेचना है। पारम्परिक तरीकों में टेलीफोन पर बेचना, मेल ऑर्डर या डोर–टू–डोर सेलिंग शामिल है। हाल ही में ऑनलाइन शॉपिंग, टेलीमार्केटिंग, आदि तरीके विकसित किए गये हैं।
- फसल को प्रसंस्करण इकाई में बेचना।
- सुपर मार्केट/रिटेल चेन से जुड़ाव।

बेहतर विपणन के घटक

उत्पाद के बेहतर विपणन के लिए निम्नलिखित घटक आवश्यक हैं:

i. **ब्रांडिंग:** उत्पाद की माँग का विस्तार करने के लिए एक उचित ब्रांडिग रणनीति अपनाई जानी चाहिए। ब्रांड विकसित कर बाजार में पहुँच आसान हो जाती है। ब्रांडिग के कुछ मुद्दे ध्यान में रखने आवश्यक हैं:

- ब्रांड का नाम चयनित करना। चूंकि, श्री अन्न फसलें पोषण युक्त हैं, इनके उत्पाद का नाम इस तरह चयन किया जाना चाहिए ताकि नाम ही उनके पोषण की गुणवत्ता को चित्रित करे।
- नाम चयन करने के बाद ब्रांड की उचित पहचान स्थापित करना आवश्यक है। इसके लिए ब्रांड के नाम के साथ एक आकर्षक पंक्ति या वाक्य चुना जाना चाहिए, जिससे ये पता लग सके कि इस उत्पाद के उपयोग से क्या–क्या फायदे

होंगे। न्यूट्री–अनाज के रूप में श्री अन्न फसलों को फिर से ब्रांडिंग करना आवश्यक है।

- अब ये निर्धारित करना होगा कि उत्पाद किस वर्ग के लिए है। अगर ये उच्च आर्थिक स्थिति एवं शिक्षित जनमानस के लिए है, तो इसका प्रचार समाचार पत्र एवं मास मीडिया द्वारा किया जा सकता है। उत्पाद को इंटरनेट के माध्यम से भी प्रचारित किया जा सकता है। चूंकि श्री अन्न फसलों के बारे में आम लोगों को कम पता रहता है, तो इसका प्रचार करने के लिए इसके व्यंजन बनाकर भी प्रदर्शित किए जा सकते हैं या फिर इनकी व्यंजन पुस्तिका को संचार माध्यम से प्रचारित किया जा सकता है।
- अगर कम लागत के प्रचार का इस्तेमाल करना हो, तो दीवारों पर तस्वीर या पब्लिक परिवहन में विज्ञापन चिपका कर भी इसका प्रचार किया जा सकता है ।
- उपभोक्ता तक पहुँच बनाने के लिए इन श्री अन्न फसल उत्पादों के ट्राइल पैक भी वितरित किए जा सकते हैं। साथ ही, श्री अन्न फसलों के पोषकगुणों पर एक प्रसार प्रपत्र लीफलेट भी बनाकर वितरित किया जा सकता है।
- प्रचार की कई तरह की सामग्री उपयोग में लाई जा सकती है जैसे बैनर, पेम्फलेट, बैग, जिन्हें वितरक या रीटेल दुकानदार को दिया जा सकता है।
- उत्पादक या उत्पादक संगठन बड़े खुदरा व्यापारी, जैसे रिलायंस, बिग बाजार, आदि से भी संपर्क कर सकते हैं तथा अपना उत्पाद इन में रख सकते हैं।
- उत्पाद विविधीकरण और ग्राहकों तथा डीलरों की प्रतिक्रिया के आधार पर उत्पादों के निरंतर सुधार एक नए उत्पाद के लिए ब्रांड के निर्माण के लिए महत्वपूर्ण हैं।

ii) **पैकेजिंग:** पैकेजिंग का अर्थ है उत्पाद को साफ, शुद्ध एवं ताजा बनाए रखने हेतु पैकेट में रखना। इसके लिए निम्नलिखित बिन्दु पर ध्यान दिया जा सकता है:

- अगर उत्पाद उच्च आर्थिक वर्ग के लिए बनाया गया है, तब पैकेजिंग का महत्व बहुत अधिक हो जाता है। अगर इन उत्पादों को स्वास्थ्य एवं पोषक उत्पादों के रूप में प्रचारित किया जाए तब पैकेट में कुछ महत्वपूर्ण संदेश लगाए जाने चाहिए। जैसे "कोई परिरक्षक नहीं मिलाया गया" या "आर्टिफिशल रंग का इस्तेमाल नहीं किया गया", आदि। इसके अतिरिक्त पैकेट में पोषण जानकारी एवं स्वास्थ्य के लिए लाभकारी गुण भी बताए जाने चाहिए।
- कुछ उत्पादों के पैकेजिंग में कुछ उपभोक्ता की पसन्द का ध्यान भी रखना चाहिए जैसे कुछ उत्पादों के पैकेट पारदर्शी रखें ताकि उपभोक्ता उत्पाद के रूप, प्रकार को देख पाएँ। इसी प्रकार पैकेट का आकार भी उत्पाद के अनुसार छोटा या बड़ा रखना चाहिए। उदाहरण के लिए, स्नैक्स के पैकेट छोटे रखें। छोटे पैकेट उपभोक्ता नए उत्पाद के लिए पसन्द करते हैं ताकि वो उसका स्वाद चख सकें।
- इसी प्रकार उत्पाद की शेल्फ लाइफ को ध्यान में रखकर पैकेट का चुनाव करें जैसे किन्हीं उत्पादों में वैक्युम पैकिंग की जाती है तथा किन्ही उत्पादों में सादी पैकिंग मान्य होती है।
- अगर उत्पाद में पर्यावरण के अनुकूल पैकिंग की जाए, तो उससे विशेषकर पोषक उत्पाद का मूल्य एवं मांग बढ़ती है।
- जितना हो सके, पैकेजिंग को आकर्षक बनाएँ। पैकिंग डिजाइन को हल्के पृष्ठभूमि और गहरे रंग लिखने के साथ आकर्षक और स्पष्ट करने की आवश्यकता है। इससे पैकेट पर लिखी विषय–सामग्री की पठनीयता बढ़ेगी।

iii) **लेबलिंग:** कम प्रचलित एवं नए उत्पाद के लिए बाजार बनाने के लिए लेबलिंग का विशेष महत्व है। लेबलिंग करते समय निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखें :

- उत्पाद का शुद्ध भार, उत्पाद का मूल्य।
- निर्माण की तिथि, समाप्ति तारीख, उत्पाद के लाम।

- उपयोग का तरीका।
- उत्पाद के सेहत के लिए लाभ जिसे की हाइलाइट किया गया हो।
- हर जानकारी को स्थानीय भाषा में भी लिखें।
- अगर उत्पादक कोई अन्य उत्पाद भी बनाता हो, तो उसकी जानकारी भी अवश्य लिखें।
- लेबल में फोटो, सर्टिफिकेशन लोगो, ब्रांड लोगो, उत्पाद का नाम, व्यंजन की जानकारी, संपर्क का पता अवश्य लिखें।

iv) **विज्ञापनः** विज्ञापनों का विपणन से पुरजोर सम्बन्ध है। यह विपणन संचार का एक रूप है जिसके माध्यम से ग्राहकों को एक ब्राण्ड या उत्पाद की अधिक खरीद और खरीदने के लिए राजी किया जाता है। आप इसके लिए सोशल मीडिया का उपयोग कर सकते हैं। मोबाइल क्रान्ति का युग है, इसका उपयोग आप अपने उत्पाद के प्रचार–प्रसार के लिए कर सकते हैं। सोशल मीडिया पर अनेक प्रचार–प्रसार के प्लेटफॉर्म हैं, जैसे– व्हाट्सएप , फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम, आदि।

सामूहिक स्तर पर उत्पाद का विपणन

कृषकों के समूह संगठन बनाकर जिले स्तर पर उत्पादन से लेकर विपणन तक का कार्य कर श्री अन्न फसलों की मूल्य श्रृंखला स्थापित कर सकते हैं। छोटे किसानों के लिए सबसे उपयुक्त एवं सफल विपणन माध्यम हैं:

- **स्वयं सहायता समूह द्वारा विपणनः** उत्पादक समूह ऐसे व्यक्तियों का समूह, जो किसी एक गतिविधि से जुड़ा हो एवं एक समान उत्पाद का उत्पादन करते हों एवं उनकी एक समान मूलभूत आवश्यकताऐं हों। समूह द्वारा विपणन एवं उत्पादन को बढावा दिया जा सकता है। साथ ही श्री अन्न फसल उत्पादों के व्यापार में सम्मिलित चैनल को छोटा कर किसानों को अधिक लाभ प्रदान किया जा सकता है। स्वयं सहायता समूह मॉडल के अंतर्गत किसान अपना समूह बनाकर श्री अन्न फसलों को इकट्ठा कर सकते हैं, एक अन्य समूह फसल का प्रसंस्करण कर सकता है तथा अन्य समूह इनका मूल्य संवर्धन कर सकता है। स्वयं सहायता समूह ग्राम स्तर पर कार्य करते हैं। श्री अन्न फसलों के लिए आपूर्ति बाजार श्रृंखला में तीन प्रमुख प्रकार के समूह शामिल किये जा सकते हैं: 1) किसानों से फसल खरीदने के लिए एक प्रथम समूह 2) छिलका उतारने और प्रसंस्करण का प्रभार एक दूसरा समूह और 3) खुदरा विक्रेताओं को उत्पाद भेजने से पहले मूल्यवर्धन एवं पैकेजिंग के लिए स्वयं सहायता समूह।
- **एफपीओ द्वारा विपणन :** उत्पादकों, विशेष रूप से छोटे एवं सीमांत किसानों का उत्पादक संगठनों में समूहीकरण सबसे कारगर तरीकों में से एक है। यह कृषि से जुड़ी अनेक चुनौतियों का सामना करने तथा निवेश, प्रौद्योगिकी एवं आदान तथा बाजार तक पहुंच में सुधार के लिए भी एक अत्यंत प्रभावी तरीका बन कर उभरा है। कृषि और सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने कंपनी अधिनियम, 1956 के विशेष प्रावधानों के अंतर्गत पंजीकृत किसान उत्पादक संगठनों को सबसे उपयुक्त संस्थानिक स्वरूप के रूप में चिह्नित किया है जिसके इर्दगिर्द किसानों को संगठित किया जाएगा तथा उनकी उत्पादन एवं विपणन क्षमता का सामूहिक रूप से लाभ उठाने के लिए उनकी क्षमता निर्मित की जाएगी। उदाहरण : "मिलेट सिस्टर्स" एफपीओ।

सामूहिक स्तर पर उत्पाद के विपणन की कार्यवाही को संचालित करने के लिए 1) इच्छा शक्ति, प्रेरणा, या प्रोत्साहन 2) ऐसा करने की क्षमता और 3) एक रणनीति या कार्य की योजना की अत्यंत आवश्यकता है। यह वैचारिक ढांचा व्यक्तिगत या समूह कार्यों पर लागू किया जा सकता है।

मंडुवा एवं मादिरा के मूल्यवर्धित उत्पाद

निधि सिंह, श्यामनाथ, महेन्द्र सिंह भिण्डा, रमेश सिंह पाल एवं दिनेश चन्द्र जोशी

भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

भारत मोटे अनाजों के बड़े उत्पादक देशों में से एक है। राजस्थान, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, गुजरात, हरियाणा, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश तथा उत्तराखण्ड इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। भारत मोटे अनाजों के 5 बड़े निर्यातक देशों में भी शामिल है। पिछले कई दशकों में मोटे अनाजों का उत्पादन निरन्तर बढ़ने के उपरान्त भी देश में प्रति व्यक्ति मोटे अनाज का उपभोग बहुत अधिक घटा है। इसका मुख्य कारण मोटे अनाजों के प्रसंस्करण में कमी का होना है। अतः मोटे अनाज, जिन्हे 'श्री अन्न' भी कहा जाता है, को प्रसंस्कृत कर रेडी टू ईट तथा रेडी टू कुक प्रकार के उत्पादों में उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। प्रस्तुत लेख में मंडुवा तथा मादिरा के मूल्यवर्धित उत्पादों के विषय में जानकारी दी गई है।

विश्वभर में प्रोटीन व ऊर्जा के लिये धान, गेहूँ व मक्का पर लगभग 60 प्रतिशत से अधिक की निंभरता है, परन्तु बदलते वातावरण के दुष्प्रभावों के कारण इन फसलों से पोषण सुरक्षा बनाये रखना एक चुनौती बन गई है। इसलिये मोटे अनाज, जो कि पोषण के अच्छे स्त्रोत हैं तथा विषम परिस्थितियों में भी अच्छा उत्पादन देने में सक्षम हैं, को भोजन में स्थान देना आवश्यक हो गया है। मंडुवा तथा मादिरा, वर्षाश्रित क्षेत्रों में उगाई जाने वाले मोटे अनाज वाली फसलें हैं। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में मंडुवा तथा मादिरा का उत्पादन प्रचुर मात्रा में किया जाता है परन्तु इन फसलों में ग्लूटन अनुपस्थित होने के कारण रोटी या अन्य उत्पाद बनाना कठिन है। इसी को ध्यान में रखते हुए इन फसलों में मूल्यवर्धन कर रेडी टू ईट प्रकार के उत्पादों का निर्माण करने की आवश्यकता है।

मंडुवा तथा मादिरा के पोषक गुण

मंडुवा तथा मादिरा कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, तथा रेशे के अच्छे स्रोत हैं। मंडुवे की 100 ग्राम मात्रा में 7.3 ग्रा. प्रोटीन, 72 ग्रा. कार्बोहाईड्रेट तथा 3.6 ग्रा. रेशा पाया जाता है वहीं मादिरा के 100 ग्राम में 7.7 ग्राम प्रोटीन, 65.5 ग्रा. कार्बोहाईड्रेट तथा 7.52 ग्रा. रेशा पाया जाता है। इन फसलों में पाये जाना वाला प्रोटीन उच्च गुणवत्ता का होता है क्योंकि इनमें अमिनो अम्लों का अच्छा संतुलन पाया जाता है। मंडुवा कैल्शियम का बहुत अच्छा स्त्रोत है। इसके 100 ग्रा. में 344 मिग्रा. तक

कैल्शियम पाया जाता है। इसके साथ–साथ मंडुवे में लौह तत्व व फॉसफोरस भी अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं।

मंडुवा – मादिरा के सेवन से स्वास्थ्य लाभ

मंडुवा तथा मादिरा में खाद्य रेशे की अधिकता होने के कारण ये पानी के साथ मिलकर पेट भरे होने का अहसास कराते हैं। इसके भारीपन के कारण पेट में पाचन की दर घट जाती है तथा भूख भी कम लगती है। मंडुवे में संतृप्त वसा की मात्रा कम होने से ये मोटापे में वृद्वि को रोकता है। मंडुवा कैल्शियम तथा विटामिन डी का एक अच्छा स्त्रोत है। इसका नियमित सेवन हड्डियों को सघन तथा सुदृढ़ बनाता है। इसका सेवन अस्थिक्षरण रोग में भी लाभदायक पाया गया है।

मंडुवा तथा मादिरा का सेवन मधुमेह के रोगियों के लिये विशेष प्रकार से लाभदायक है। इन फसलों का ग्लाइसेमिक इन्डेक्स कम होने के कारण ये खून में व्याप्त शर्करा को नियंत्रित करता है। कई व्यक्तियों में ग्लूटन नामक प्रोटीन, जो गेहूँ से बने उत्पादों मे पाया जाता है, से एलर्जी की समस्या होती है, ऐसे व्यक्तियों द्वारा मोटे अनाज के आटे से बने खाद्यों का प्रयोग उपयोगी होता है।

मंडुवे तथा मादिरा में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेड की पर्याप्त मात्रा होने से ये पोषण का सस्ता स्रोत है। इसके साथ–साथ इसमें लौह तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो शरीर में खून की मात्रा को बढ़ाने में सहायक हैं। अंकुरित मंडुवा विटामिन सी से भरपूर होता है जो शरीर में आईरन के अवशोषण को बढ़ाता है। इस प्रकार मंडुवे व मादिरा का नियमित सेवन कुपोषण से लड़ने में भी सहायक है। पाचन संबधी समस्याओं में भी मंडुवे एवं मादिरा का सेवन लाभकारी है। इसके अलावा मंडुवा मादिरा का सेवन हृदय रोग व कैन्सर जैसे गम्भीर रोगों में भी फायदेमन्द पाया गया है।

मंडुवा व मादिरा से कई प्रकार के उत्पाद बनाये जा सकते हैं जिनमें मंडुवा के लड्डू, मंडुवा और मादिरा के पापड़, नमकीन, केक, बिस्किट, मंडुवा कुकीज, सेंवई, मंडुवा फ्लेक्स, मंडुवा नूडल्स, मंडुवा चॉकलेट बॉल्स मुख्य हैं। मंडुवा तथा मादिरा से निर्मित मूल्यवर्धित उत्पाद इस प्रकार हैं:–

मंडुवा के लड्डू

मंडुवे के लड्डू बड़ी आसानी से घर पर ही बनाये जा सकते हैं जिसे बच्चों द्वारा काफी पसंद किया जाता है। मंडुवे से निर्मित लड्डू पोषण व स्वास्थ की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है।

सामग्री–100 ग्राम मंडुवे का आटा, 90 ग्राम पिसी हुई चीनी, 50 ग्राम घी, 20 ग्राम सूखे मेवे तथा 2 छोटी इलाईची।

विधि–मंडुवे के आटे को कढ़ाई में थोड़ा सा घी गर्म कर सुनहरा भूरा होने तक भूनें। अब चीनी मिला लें। सूखे मेवों व इलाईची को कूट कर मिलायें। भुने मिश्रण में बचे घी को पिघलाकर अच्छी प्रकार से मिला कर लड्डू बाँध लें तथा डिब्बे में भण्डारित करके रखें।

मंडुवा लड्डू

मंडुवे की नमकीन

मंडुवे की नमकीन एक स्वादिष्ट नाश्ता है जिसे चाय के साथ खाया जा सकता है तथा बच्चे भी इसे चाव से खाते हैं।

सामग्री– 200 ग्रा. मंडुवे का आटा, 300 ग्रा. बेसन, 1/4 चम्मच रामदाना का आटा, हींग–आधा चम्मच, मूंगफली दाना–50 ग्रा., लहसुन की फाँके–10–12 गोलाई में कटी हुई, कढ़ीपत्ता, मिर्च व नमक– स्वादानुसार, रिफाइण्ड तेल– 1 लीटर

विधि– मंडुवे का आटा, बेसन तथा रामदाने के आटे को साथ एकसार होने तक मिलायें। फिर हींग को गुनगुने पानी में घोल कर नरम गूंथ लें। कढ़ाई में तेल गरम

कर सेव बनाने वाली मशीन से सेवियों को खस्ता तल लें, साथ ही मूंगफली दाना, लहसुन की फाँके तथा कढ़ीपत्ता को भी तेल में अलग–अलग तल लें। अन्त में तली सेवइयों के ठंडा हो जाने पर स्वादानुसार नमक व लाल मिर्ची पाउडर मिलाकर वायुरहित डिब्बे में भण्डारित कर के रख लें।

मंडुवा नमकीन

मंडुवे के पापड़

मंडुवे से घर पर ही बड़ी आसानी से पापड़ तैयार किये जा सकते हैं। इसके लिये मंडुवे का आटा 50 ग्राम, आधा चम्मच नमक, आधा चम्मच अजवाईन तथा 500 मिली ली. पानी।

विधि– एक भगोने को आंच पर रख कर पानी गरम होने के लिये रखें। अब इसमें नमक तथा अजवाईन मिलायें। अब धीरे–धीरे चलाते हुए मंडुवे के आटे को मिला लें। गाढ़ा होने तक पकायें। प्लास्टिक शीट या स्टील की थाली में पापड़ बना कर धूप में सुखा लें। सूखे पापड़ों को वायुरहित डिब्बे में भण्डारित कर के रखें।

मंडुवा पापड़

मंडुवे का कपकेक

संपूर्ण मंडुवा आटे से बना कपकेक ग्लूटन रहित होता है। स्वादिष्ट कपकेक कई पोषक गुणों से भरपूर हैं।

सामग्री– 100 ग्राम मंडुवे का आटा, 60 ग्रम चीनी, 50 ग्राम रिफाइण्ड तेल, 100 मिली. दूध, 1.25 ग्राम बेकिंग पाउडर, 1.0 ग्राम कोको पाउडर, 4–5 बूंद वनिला एसेन्स तथा दो अंडे।

विधि– मंडुवे के आटे, बेकिंग पाउडर, कोको पाउडर को ठीक से छान कर एक साथ मिला लें। चीनी, रिफाइण्ड व अण्डे को मिलाकर अच्छे से फेंट कर क्रीम तैयार कर लें। अब क्रीम में आटे के मिश्रण के साथ दूध मिलाकर 5 मिनट तक फेंटें। तैयार बैटर (घोल) को कपकेक मोल्ड में भरकर प्रीहीट किये गये ओवन में 170 डिग्री. से. तापमान में 22 मिनट तक बेक करें।

इसी प्रकार मादिरा से भी कई उत्पाद बनाये जा सकते हैं, जो घरेलू स्तर पर बड़ी आसानी से तैयार किये जा सकते हैं।

मादिरा की कचरी सामग्री– मादिरा का आटा–100 ग्रा., पानी– 50 मि.ली., अजवाईन– एक चौथाई चम्मच, नमक– स्वादानुसार

विधि– कचरी बनाने के लिये पानी को आँच पर रखकर नमक तथा अजवाईन मिला लें। पानी गुनगुना हो जाने पर मादिरा के आटे को धीरे धीरे मिलाकर 2 मिनट तक पकायें। कचरी बनाकर धूप में सुखाकर वायुरहित डिब्बे में भण्डारित करके रखें। आवश्यकता पड़ने पर तेल गरम कर तल लें।

मादिरा कचरी

मादिरा की चकली

मादिरा की चकली भी स्वादिष्ट व्यंजन है। इसे बनाकर प्रतिदिन नाश्ते के तौर पर इस्तेमाल किया जा सकता है। मादिरा, रागी, बेसन तथा रामदाने से बनी चकली पौष्टिक एवं सेहतमन्द होती है।

सामग्री– मादिरा का आटा– 50 ग्रा., मंडुवे का आटा–25

ग्रा., बेसन –25 ग्रा., रामदाना का आटा– 25 ग्रा., बेकिंग सोडा– 0.5 ग्रा., अदरक लहसुन पेस्ट– आधा चम्मच, तिल – आधा चम्मच, नमक व लालमिर्च पाउडर– स्वादानुसार, रिफाइण्ड तेल– आधा लीटर।

विधि– मादिरा, मंडुवा, बेसन तथा रामदाने के आटे को छान कर एकसार होने तक मिला लें। नमक मिर्च, अदरक लहसुन पेस्ट, तिल तथा 2 चम्मच रिफाइण्ड तेल मिलाकर मिश्रण को गूँथ लें। कढ़ाई में तेल गरम करके चकली को सुनहरा होने तक तल लें।

मादिरा की मिठाई सामग्री– मादिरा के आटे से मिठाई भी तैयार की जा सकती है। इसे त्यौहार या किसी भी उत्सव के अवसर पर घर में ही तैयार कर सकते हैं।

सामग्री– मादिरा का आटा–40 ग्रा., बेसन– 30 ग्रा, चीनी–30 ग्रा., घी–10 ग्रा, पानी–85 मि.ली., पिसी इलाईची– एक चौथाई चम्मच, खाने वाला रंग (पीला)–एक चुटकी

विधि– कढ़ाई में बेसन को धीमी आँच पर 15 मिनट तक भून कर अलग रख दें। मादिरा के आटे को 5 मिनट तक घी में भून लें। बेसन को मिलाकर 5 मिनट तक और भूनें। पानी में चीनी व रंग मिलाकर 5–6 मिनट तक पकाकर चाशनी तैयार कर लें। भूने मिश्रण में चाशनी मिलायें। प्लेट में निकाल कर ठंडा होने के लिये रख दें। ठंडा होने पर मनचाहे आकार में काट लें।

इस प्रकार मंडुवा तथा मादिरा के मूल्यवर्धित उत्पाद घर पर ही बड़ी आसानी से तैयार किये जा सकते हैं तथा दैनिक आहार के उपयोग में लाये जा सकते हैं। इन फसलों से निर्मित उत्पाद स्वास्थ्य के लिये लाभकारी हैं तथा पोषण के सस्ते विकल्प के तौर पर इस्तेमाल किये जा सकते हैं, जिससे इनके उपभोग को भी बढ़ावा मिल सकेगा। साथ ही कृषक मोटे अनाजों से मूल्यवर्धित उत्पाद बनाकर आय भी अर्जित कर सकते हैं।

सभी भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक है, तो वो देवनागरी ही हो सकती है।

– जस्टिस कृष्णस्वामी अय्यर

विविध लेख

सूचना प्रौद्योगिकी का कृषि विकास में महत्व

कुशाग्रा जोशी एवं रेनू सनवाल
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

हमारे देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है। लगभग दो दशक पहले कृषि कार्य परम्परागत ज्ञान के आधार पर होता था। नवीनतम व अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियों का आदान–प्रदान मानवीय स्तर पर होता था जिस कारण अधिकांश किसानों को इसका लाभ नहीं मिल पाता था। आज कृषि विज्ञान में आशातीत उन्नति हुई है तथा हमारे पास बहुत तकनीकें, जैसे उन्नत किस्में, उन्नत फसल प्रणालियां, जल संग्रहण तकनीकी, चारा उत्पादन, कीट प्रबंधन, कृषि यंत्र, इत्यादि उपलब्ध हैं। लेकिन मुख्य समस्या है इन सभी उन्नत प्रौद्योगिकियों का जरूरतमंद कृषकों तक न पहुंच पाना। यह सूचना अगर सही समय पर कृषकों तक पहुंच जाए, तो कृषि क्षेत्र में काफी विकास संभव हैं। विभिन्न क्षेत्रों में विकास के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी अहम भूमिका अदा कर रही है। कृषि का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं है।

पर्वतीय कृषि के संदर्भ में संचार तकनीकों की प्रासंगिकता

पर्वतीय कृषि क्षेत्रों में किसान खेती अत्यन्त जोखिम भरी दशाओं एवं अनिश्चितताओं में करते हैं क्योंकि यहां खेत छोटे और बंटे हुए हैं, कृषि संसाधनों की स्थिति भी जोखिम भरी हो गई है। समय पर सही जानकारी

न मिलना तथा अपर्याप्त प्रसार तंत्र होने जैसी बाधाएं पर्वतीय कृषि को और कठिन बनाती हैं। ऐसे में सूचना एवं संचार की तकनीकियां कृषकों का सूचना सशक्तिकरण कर पर्वतीय कृषि के विकास का सशक्त साधन बन सकती हैं। इससे कृषक घर बैठे ही कृषि संबंधी जानकारी एकत्रित कर सकते हैं तथा सूचना एकत्र करने में समय एवं दूरी की समस्या का भी यह एक विकल्प है। इससे सूचना दूर–दराज के कठिन क्षेत्रों तक आसानी से पहुंच जाती है। यदि सही समय पर सही सूचना मिल जाए, तो कृषि क्षेत्र में काफी विकास हो सकता है।

पारंपरिक संचार माध्यमों का कृषि विकास में योगदान

ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का उपयोग रेडियो, टेलीविजन, पत्रिकाओं, समाचार पत्रों जैसी पारम्परिक मीडिया के रूप में किया जाता है। नवीन माध्यमों की बात करें, तो इसमें वर्तमान में इंटरनेट, मोबाइल इत्यादि का प्रयोग किया जा रहा है। इनके माध्यम से कृषक बंधुओं को खेती से संबंधित जानकारी समयवार एवं ऋतुवार प्रदान की जा सकती है। इसके अलावा कई तरह की वेबसाइट भी बनाई गई हैं, जिनका इंटरनेट के माध्यम से उपयोग किया जा सकता है। एक तरह से कहें, तो यह कृषि में सूचना क्रांति लाने के लिए मुख्य साधन है। रेडियो कृषि को बढ़ावा देने एवं ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु एक प्रभावी माध्यम है। विशेषरूप से पर्वतीय क्षेत्रों में, जहां बिजली की पहुंच अभी भी एक समस्या है, वहां यह शीघ्रता से सूचना का संचार करता है। किसान इसे उपयोगी इसलिए भी मानते हैं क्योंकि कृषकों के शैक्षिक स्तर का इस पर प्रभाव नहीं पड़ता। सर्वप्रथम कृषि विकास में सूचना प्रौद्योगिकी के अंतर्गत संचार माध्यम में रेडियो का ही नाम आता है।

आकाशवाणी द्वारा समय–समय पर विभिन्न कार्यक्रमों का प्रसारण किया जाता है जैसे वार्ता, पूछताछ के कार्यक्रम, साक्षात्कार इत्यादि। रेडियो द्वारा कृषि वैज्ञानिकों की बातें नियमित रूप से कृषकों तक पहुंचने लगीं। प्रगतिशील कृषकों की समस्याओं का निराकरण किया जाने लगा। आज के परिपेक्ष्य में 'किसान वाणी' कार्यक्रम द्वारा कृषकों को जानकारी दी जाती है। इसका प्रसारण प्रतिदिन सायं 7.00 बजे होता है। कह सकते हैं कि कृषकों के मुख्य साथी के रूप में रेडियो अहम भूमिका निभाता है।

रेडियो के अलावा टेलीविजन की भूमिका भी मुख्य है। चौपाल, किसान वाणी, कृषि दर्शन कार्यक्रम काफी लोकप्रिय कार्यक्रम हैं। टेलीविजन में दृश्य के रूप में फसल कीटों, रोगों, किस्मों इत्यादि के बारे में जानकारी कृषकों को प्रत्यक्ष रूप में दिखाई देती है। दिखाई और सुनाई देने के कारण टेलीविजन द्वारा दी गयी जानकारी और अधिक बेहतर तरीके से अवशोषित की जाती है। दूरदर्शन द्वारा कृषि दर्शन कार्यक्रम सायं 5.30 बजे डी डी नेशनल पर प्रसारित किया जाता है। इससे कृषि की नवीनतम जानकारी के अलावा कृषक सीधे प्रसारण के दौरान अपनी समस्याओं को फोन द्वारा भी पूछ सकते हैं जिससे उनकी कृषि सम्बन्धी समस्याओं का समाधान उन्हें तत्काल ही मिल जाता है। इसके अलावा कृषि आधारित जानकारी पैम्पलेट, पोस्टर, प्रपत्रों, पत्रिकाओं द्वारा भी दी जाती है।

कई कृषि आधारित पत्रिकाएं मुद्रित की जाती हैं जिनमें विभिन्न विशेषज्ञ एवं वैज्ञानिक कृषकों के लिए कृषि सम्बन्धी लेख द्वारा जानकारी देते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा प्रकाशित की जाने वाली मुख्य पत्रिकाएं हैं खेती, फल–फूल, इंडियन फार्मिंग, इंडियन हॉर्टिकल्चर। इसके अलावा कई अन्य प्रकाशकों द्वारा भी कृषि पर पत्रिकाएं बाजार में उपलब्ध हैं जैसे कृषि जागरण, मॉर्डन खेती, एग्रो इंडिया, इत्यादि।

नवीनतम संचार माध्यम

नवीनतम माध्यमों में मुख्य है सूचना प्रौद्योगिकी, जो दिन–प्रतिदिन विकसित हो रही है। सूचना प्रौद्योगिकी इंजीनियरिंग की एक शाखा है जिससे कम्प्यूटर व सूचना संचार के माध्यम को प्रयोग करके सूचना का संचारण, संग्रहण एवं प्राप्ति की जा सकती है। इंटरनेट एक इलैक्ट्रोनिक नेटवर्क है जिसमें संचार के करोड़ों कम्प्यूटर एक दूसरे से जुड़े होते हैं। इंटरनेट एक ऐसा नेटवर्क है जिसके द्वारा पूरा विश्व ही एक वैश्विक गांव बन गया है। बहुत सारी वेबसाइट बनाई जा चुकी हैं जो कृषि संबंधी जानकारी उपलब्ध कराती हैं। मोबाइल क्रान्ति के द्वारा आज इंटरनेट का प्रयोग काफी आसान हो चुका है।

कृषि विपणन एवं सूचना प्रौद्योगिकी

आज हम इंटरनेट के द्वारा राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय बाजार का मोल–भाव जान सकते हैं। आई.टी.सी. कम्पनी ने ई–चौपाल का शुभारम्भ किया है। यह वेबसाईट ग्रामीण विकास में काफी योगदान दे रही है। इस वेबसाइट का पता है www.echoupal.com। ई–चौपाल के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में इन्टरनेट कियोस्क लगाये गये हैं जो किसानों द्वारा ही संचालित किये जा रहे हैं। इससे किसानों को मंडी के भाव, उन्नत कृषि प्रणाली एवं बीज तथा अन्य आदानों के लिए आर्डर देने की सहूलियत हो जाती है। इससे किसान अपने उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ा कर उचित दाम भी प्राप्त कर सकते हैं। एक कियोस्क केन्द्र से 5 किमी दायरे के लगभग 600 किसान लाभांवित हो सकते हैं। इस तकनीक का प्रयोग करने से बिचौलियों की हिस्सेदारी समाप्त होती जा रही है व किसानों को इसका लाभ सीधे–सीधे हो रहा है, जिससे किसानों की आय भी बढ़ रही है। http://agmarket.nic वेबसाइट से किसान राष्ट्रीय बाजार का मोल–भाव जान सकते हैं, और अपने उत्पाद का सही मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

मोबाइल एप्लीकेशन

जिन कृषकों के पास एन्ड्राइड मोबाइल फोन है वह भाकृअनुप द्वारा तैयार की गयी "किसान सुविधा" मोबाइल एप्लीकेशन को डाउनलोड कर सकते हैं। इसमें बटन के एक क्लिक के साथ ही कृषकों को अगले पांच दिन के मौसम पर सूचना, बाजार भाव, कृषि पर सलाह, पौध संरक्षण, डीलर्स इत्यादि पर भी सूचना मिल जाती है। इसके अलावा भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा "पूसा कृषि" एप तथा सीडैक मुम्बई द्वारा "फार्म–ओ–पीडिया" एप भी बनाये गये हैं। "एम किसान" एप के द्वारा किसानों को कृषि संबंधी सलाह विशेषज्ञों एवं सरकारी अधिकारियों द्वारा प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त फसल बीमा एप भी बनाया गया है जिससे कृषि क्षेत्र के आधार पर बीमा प्रीमियम की गणना की जा सकती है। भारतीय कृषि को वैश्विक पटल पर लाने हेतु "एगमार्कनेट" एप तैयार किया गया है। इसके द्वारा 50 किलोमीटर के क्षेत्रफल के अन्तर्गत फसलों के मण्डी भाव का पता आसानी से चल सकता है। पशु प्रबंधन की जानकारी हेतु राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड द्वारा 'पशु पोषण" एप तैयार किया गया है। इन एप्लीकेशन्स को एन्ड्राइड मोबाइल फोन पर आसानी से डाउनलोड कर इस्तेमाल किया जा सकता है।

संचार माध्यम द्वारा कृषक महिला सशक्तिकरण

कृषक महिला सशक्तिकरण में भी सूचना/संचार माध्यमों का अपना महत्व है। अगर देखा जाए तो पर्वतीय कृषि महिला आधारित ही है तो ऐसे में कृषि की उन्नत जानकारी महिला कृषकों तक पहुंचाना आवश्यक है, परन्तु महिला कृषक बहुत ही कम संख्या में प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रतिभाग कर पाती हैं। ऐसे में संचार माध्यमों के प्रयोग से कृषिरत महिलाओं को कृषि सम्बन्धी जानकारी उपलब्ध कराई जा सकती है। कृषक महिलाएं बाजार तक अपने कृषि या मूल्यवर्धित उत्पादों को भी कम ही विपणित कर पाती हैं। इसके लिए ई–कामर्स की विपणन हेतु वेबसाइट है जिनमें कृषक महिला समूह ऑनलाइन अपना उत्पाद बेच सकती हैं।

पर्वतीय कृषकों के लिए वि.प.कृ.अनु.सं. अल्मोड़ा द्वारा प्रदत्त सेवाएं

इंटरनेट के द्वारा कृषि संबंधी जानकारी उपलब्ध कराने हेतु भाकृअनुप–वि.प.कृ.अनु.सं., अल्मोड़ा ने अपनी वेबसाइट तैयार की है। इस वेबसाइट का पता है www.vpkas.icar.gov.in.। इस पर संस्थान द्वारा विकसित की गयी उन्नत प्रजातियों की जानकारी कृषक बन्धुओं को मिल जाती है। साथ ही कौन सी प्रजाति किस क्षेत्र के लिए अनुकूल है, उसकी उत्पादकता, पकने की अवधि, रोग प्रतिरोधिता इत्यादि कृषकों को उपलब्ध कराई जाती है। इस जानकारी से कृषक निर्णय ले सकते हैं कि उनके क्षेत्र विशेष के लिए कौन सी प्रजाति उपयुक्त रहेगी।

संस्थान ने पर्वतीय कृषि पर आधारित तीन मोबाइल एप वीपीकेएएस फसल गुरू, वीपीकेएएस कृषि समृद्धि, वीपीकेएएस व्हाइट ग्रब प्रबन्धन भी तैयार किये हैं जिन्हें किसान अपने एन्ड्राइड फोन पर प्रयोग कर सकते हैं।

भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के प्रायोजित पोर्टल एम–किसान (mKisan) के द्वारा पर्वतीय कृषकों को कृषि संबंधित जानकारी निःशुल्क एस.एम.एस. द्वारा प्रदान की जाती है। इसके लिए कृषक संस्थान में संपर्क कर अपना मोबाइल नम्बर पंजीकृत करा सकते हैं। इसके अलावा हाल ही में पर्वतीय कृषकों को कृषि संबंधी जानकारी उनकी आवश्यकता के अनुसार प्रदान करने के लिए एक एस.एम.एस. सेवा शुरू की है। इसमें भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा से जुड़े किसानों के मोबाइल पर समय व मौसम अनुसार एम.एम.एस. संदेश निःशुल्क पहुंचाए जाते हैं। यह निःशुल्क सेवाएं हैं। इसके लिए बस कृषक बंधुओं को संस्थान में संपर्क कर अपने मोबाइल नम्बर का पंजीकरण कराना होता है। कृषि सलाहकार सेवा भी चलाई जा रही है जिसकी दूरभाष संख्या 1800 180 2311 है। विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा 'कृषि समृद्धि' रेडियो कार्यक्रम संचालित किया जाता है जो प्रत्येक रविवार सायं 7.10 बजे प्रसारित होता है। इसमें पर्वतीय कृषि की जानकारी मौसम एवं ऋतु अनुसार कृषकों को दी जाती है और यह कार्यक्रम कृषकों द्वारा काफी पसंद किया जाता है।

संस्थान द्वारा हवालबाग प्रक्षेत्र में प्रतिवर्ष दो बार खरीफ व रबी में किसान मेलों का आयोजन किया जाता है। कृषक बंधुओं को कृषि कार्यों की समसामायिक जानकारी देने के लिए वार्षिक कृषि कैलेन्डर भी प्रकाशित किया जाता है। इसके अलावा कृषि वैज्ञानिकों द्वारा लिखित प्रसार प्रपत्र, तकनीकी बुलेटिन एवं पुस्तकें भी मुद्रित सामग्री के रूप में कृषकों के लिए संस्थान व संस्थान के वेबसाइट में उपलब्ध है।

कृषि क्षेत्र में सूचना के संचार के कारण देश के कृषि परिदृश्य में तेजी से बदलाव आ रहा है। सूचना तकनीकी का सबसे अधिक महत्व यह है कि इसके द्वारा कृषि वैज्ञानिक अपने कार्यस्थल से ही किसानों की समस्या को हल कर देते हैं। इस समस्या का समाधान नई तकनीकी यानि सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल करके कर सकते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी बहुत ही उपयोगी एवं कृषि विकास के लिए अहम भूमिका निभा सकती है। इसकी सहायता से सूचना का शीघ्रता से बहुत ही कम समय में आसानी से आदान–प्रदान किया जा सकता है।

हिन्दी हमारे राष्ट्र की अभिव्यक्ति का सरल स्रोत है।

– सुमित्रानन्द पंत

पर्वतीय क्षेत्रों में घर के आंगन में मुर्गीपालन: एक लाभप्रद सहव्यवसाय

नवल किशोर सिंह, हरीश चन्द्र जोशी एवं मेदनी प्रताप सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर, बागेश्वर, उत्तराखंड

हमारे देश की बढ़ती जनसंख्या के कारण प्रोटीन खाद्य पदार्थ की मांग भी उसी रफ्तार में बढ़ रही है। इसकी पूर्ति सब्जी, दलहनी फसल के अलावा मुर्गी के मांस तथा अण्डे से भी की जाती है। किसान इसकी पूर्ति घर के आंगन (बैकयार्ड) में मुर्गीपालन द्वारा आसानी से कर सकते हैं। उत्तराखण्ड राज्य में अधिकांश किसान लघुसीमांत (1–2 है.) तथा सीमांत (2–4 है.) वर्ग में आते हैं तथा कृषि योग्य भूमि भी अधिकतर वर्षा आधारित है। अतः जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए यहाँ पर कृषि पर सम्पूर्ण निर्भर ना रहते हुए किसानों को कृषि के साथ–साथ सह–व्यवसाय अपनाना भी अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

सह व्यवसाय के अन्तर्गत मुर्गीपालन, बकरीपालन, गाय व भैंसपालन, मधुमक्खी पालन, मत्स्य पालन, खरगोश पालन, इत्यादि व्यवसाय आते हैं। ये व्यवसाय ऐसे हैं जिनमें कम लागत एवं कम समय में अधिक मुनाफा होता है। परन्तु इस दिशा में विकास कम होने के कारण अनेक हैं, जिनमें मुख्यतः जानकारी का अभाव, सामाजिक एवं धार्मिक प्रतिबद्धता, धन की कमी, युवाओं, खासकर शिक्षित युवाओं में मेहनत का अभाव, इत्यादि कारण साधारणतया देखने को मिलते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली द्वारा प्रत्येक जिले में कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना कर एक महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। इससे वैज्ञानिकों तथा किसानों की बीच की दूरी कम हुई है। इस लेख में घर के आंगन में मुर्गीपालन के महत्वपूर्ण बिन्दुओं के सम्बन्ध में बताया गया है।

पर्वतीय क्षेत्र के कुछ भाग में शीतोष्ण तथा कुछ भाग

में समशीतोष्ण जलवायु पायी जाती है। अतः बैकयार्ड मुर्गीपालन कब शुरू करें, मुर्गीबाड़ा किस प्रकार का हो, मुर्गी के चूजे कहां से प्राप्त करें, मुर्गी का रखरखाव कैसे करें, इत्यादि प्रश्न हर मुर्गीपालन शुरु करने वाले किसान के मन में उठते हैं।

मुर्गी पालन शुरू करने का सही समय

पर्वतीय क्षेत्र में मुर्गीपालन हेतु सबसे उपयुक्त समय मार्च से सितम्बर तक माना जाता है क्योंकि यहां मार्च से पहले और सितम्बर के बाद सर्दी अधिक ही रहती है, जिसके लिए किसान साधन के अभाव में उपयुक्त प्रबन्धन नहीं कर पाते हैं और चूजों की मृत्यु दर बढ़ जाती है।

मुर्गीबाड़ा

खासकर घर के आंगन में मुर्गीपालन हेतु विशेष प्रकार के मकान की जरूरत नहीं पड़ती है। इसके लिए किसान घर के आंगन में दो तरीके से मुर्गी पालन कर सकते हैं–

1– बिछावन विधि द्वारा: इसमें औसतन 0.5 से 1 वर्ग फुट प्रति मुर्गी के हिसाब से गत्ते या बांस से घेराबन्दी कर जमीन में 3–4 इंच तक धान की भूसी या लकड़ी का बुरादा बिछा दिया जाता है और ऊपर से घास–फूस या टिन की चादर का छप्पर बनाते हैं।

2– पिंजड़ा विधि द्वारा: इसे लकड़ी तथा लोहे की जाली से तैयार करते हैं।

मुर्गीघर किसान चाहे कच्चा बनायें या पक्का, इसे बनाते वक्त निम्न बातों का ध्यान रखें–

- प्रत्येक मुर्गी के घूमने फिरने के लिए उचित जगह हो। जगह कम होने से चूजे एक–दूसरे से दब कर मर सकते हैं तथा बड़ी मुर्गियों में श्वास सम्बन्धी बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं।
- उचित मात्रा में स्वच्छ हवा का आवागमन हो जिससे अधिक गर्मी तथा सर्दी से बचाव हो सके।
- बारिश की बूंदे मुर्गीघर में न गिरें।
- शुरु के 15 दिन देखभाल की दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होते हैं अतः इस दौरान तापमान तथा दाने का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

साधारणतया चूजे से लेकर बड़ी मुर्गी होने तक 0.25 वर्ग फुट से 2 वर्ग फुट तक जगह की जरूरत पड़ती है लेकिन हमेशा बाड़ा बनाने में परेशानी से बचने का उपाय यह है कि 1–1 वर्ग फुट प्रति मुर्गी के हिसाब से घर बनायें।

चूजे हमेशा सरकारी मान्यता प्राप्त हेचरी अथवा मुर्गीफार्म से पूरी जानकारी लेने के बाद ही प्राप्त करें। पूरी जानकारी से हमारा तात्पर्य चूजे की प्रजाति, स्ट्रेन, ब्रायलर, लेयर या क्रॉयलर, वृद्धि दर, ब्रूडिंग क्षमता, इत्यादि से है। घर के आंगन में मुर्गीपालन हेतु क्रॉयलर प्रकार की मुर्गी ज्यादा टिकाऊ एवं लाभप्रद है।

रखरखाव

चूजे लाने से पहले इनके लिए आवास बनाकर उसमें चूने से सफेदी कर दें। फर्श पर धान की भूसी बिछाकर ऊपर से अखबार की 2–3 तह बिछा दें। एक दिन के ही चूजे लायें और लाते ही ग्लूकोज या गुड़ का पानी उन्हें पिलायें, जिससे उनकी रास्ते की थकान मिट जाए। दाना बाजार से लायें हैं तो सही है, यदि नहीं है तो घर में बनाकर भी दे सकते हैं। इसके लिए मक्का, गेहूँ के दले हुए बारीक दाने पेपर के ऊपर रख दें। पानी के लिए अलग से प्लास्टिक या स्टील का बर्तन या बांस का आधा भाग काटकर फीडर बना सकते हैं। प्रथम 7–10 दिन तक पीने के पानी में विटामिन तथा बायोट्रीम या इनरोफ्लोक्सासीन मिलाकर (दवा कम्पनी के निर्देशानुसार) अवश्य दें। प्रतिदिन दाना व पानी उचित मात्रा में देना चाहिए तथा चूजों के चलने–फिरने, खाने–पीने, इत्यादि गतिविधियों पर बारीकी से ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है।

मुर्गी पालन में उपचार से भला बचाव है क्योंकि एक बार कोई समस्या उत्पन्न होने पर उपचार का खर्च तथा मृत्यु दर के चलते आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। इससे बचाव के लिए प्रथम 21 से 30 दिन तक ब्रूडिंग अवस्था में तापमान, बिछावन, आहार, टीकाकरण, इत्यादि पर सघन निगरानी रखनी चाहिए।

चूजों के पालन–पोषण में तापमान का विशेष महत्व है। मुर्गी अपने बच्चों को प्राकृतिक रूप में अपने शरीर द्वारा गर्मी पहुंचाती है परन्तु कृत्रिम रूप से भी बच्चों को गर्मी देनी पड़ती है। इसके अन्तर्गत कोयले व लकड़ी की अंगीठी, बिजली के बल्ब, लैंप, इत्यादि तापमान अनुकूल रखने के लिए प्रयोग किये जाते हैं। ग्रामीण इलाकों में ब्रूडर का तापमान कम है या ज्यादा, इसका अनुमान चूजों के व्यवहार से पता चलता है। यदि चूजे बल्ब के आसपास एकत्रित रहते हैं, तो तापमान कम हाने का पता लगता है और यदि चूजे बल्ब से दूर–दूर रहते हैं तो इसका मतलब तापमान ज्यादा है। अतः दोनों ही स्थितियों को सही करने के लिए बल्बों की संख्या तथा बल्ब की ऊंचाई बढ़ा या घटा कर संतुलन बना सकते हैं। सामान्य स्थिति में चूजे पूरे ब्रूडर में एक समान विचरण करते हुए दिखाई देंगे।

मुर्गीपालन में ब्रूडिंग का उतना ही महत्व होता है, जितना मकान बनाने में नींव का होता है। अतः ब्रूडर घर में दाने की जगह, पानी के बर्तन, चूजों का बिछावन, अच्छी रोशनी, सफाई, आदि सभी बातों का पूरा ध्यान रखना चाहिए।

प्रारम्भ में आहार में चावल की कनकी/मक्का का दलिया अथवा थोड़ा बहुत संतुलित (चिक स्टार्टर) आहार (उपलब्ध होने पर) दें। दो–तीन सप्ताह बाद से चूजे को घर का बना हुआ भोजन, बचा अनाज, हरी शाक–सब्जियाँ, मूली के पत्ते, प्याज के पत्ते, चारा तथा राइस पॉलिश, आदि देना चाहिए।

आहार के अलावा मुर्गियों का बीमारियों से बचाव के लिए टीकाकरण अवश्य करें। यदि मुर्गी पालन मांस के लिए किया जा रहा है, तो रानीखेत रोग का टीका प्रथम सप्ताह में, इसके बाद गम्बोरो रोग का टीका 12–14 दिन में तथा इन्फेक्शियस ब्रोंकाइटिस का टीका 15–20 दिन में अवश्य करें। इसकी मात्रा भी दवा निर्माता कम्पनी के दिशा–निर्देश के अनुसार ही देनी चाहिए। इससे चूजों की मृत्यु दर भी कम हो जाती है तथा पालन आसान हो जाता है। यदि मुर्गीपालन, अंडा उत्पादन के लिए किया जा रहा है, तो उपरोक्त रोगों के टीके के अलावा रानीखेत का दूसरा टीका 28वें दिन, तीसरा टीका 8–10 सप्ताह में, चेचक का पहला टीका 6–8 सप्ताह में, दूसरा टीका 12–13 सप्ताह में कुक्कुट विशेषज्ञ की सलाह के अनुसार करना चाहिए।

ग्रामीण क्षेत्रों में खासकर सह–व्यवसाय के रूप में मुर्गीपालन करने पर इनका वजन 1–1.5 किग्रा. होने में 8–10 सप्ताह लग जाते हैं। जब मुर्गी 1–1.5 किग्रा. की हो जाये तब इन्हें बेचना शुरू कर देना चाहिए क्योंकि मांस

वाली मुर्गी का ज्यादा वजन होने पर पालने में खर्च ज्यादा आता है और मांस की लोकप्रियता भी कम हो जाती है।

अंडा उत्पादन के लिए मुर्गी पालन करने पर मुर्गों और मुर्गियों का अनुपात 1:5 रखना चाहिए। यदि मार्च–अप्रैल महीने में मुर्गी पालन शुरू करते हैं, तो अण्डे का उत्पादन सर्दी के समय सितम्बर–अक्टूबर में शुरू हो जाता है तथा इसका मूल्य भी करीब 10 रूपये प्रति अण्डा मिलता है। अण्डा देते समय मुर्गियों के आहार में कैल्शियम की अतिरिक्त मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए प्रत्येक 3–4 महीने में पेट के कीड़े की दवा देने के बाद कैल्शियम युक्त खनिज मिश्रण या मारबल चिप्स देना चाहिए। इस प्रकार प्रति मुर्गी पालन पर करीब 50–60 रूपया खर्च आता है, लेकिन इससे उत्पादित अण्डे व मांस द्वारा 4–5 गुणा मुनाफा मिल जाता है। काश्तकार मुर्गीपालन को सह–व्यवसाय के रूप में अपनाकर अण्डे व मांस को बेचकर आर्थिक लाभ भी प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही इसके प्रयोग से अपने परिवार के सदस्यों के लिए प्रोटीन की आवश्यकता की पूर्ति भी कर सकते हैं।

घर के आंगन में मुर्गीपालन का व्यवसाय ऐसा है जिससे न तो किसी की नौकरी प्रभावित होती है और न ही किसान के कृषि कार्य। अतः यह एक उत्तम सह–व्यवसाय है। यह व्यवसाय किसानों के परिवार का कुपोषण दूर करने के साथ–साथ एक अच्छी आय का साधन भी सिद्ध हो सकता है। अतः कृषक इसे अपनाकर अपना स्वास्थ्यवर्धन करने के साथ–साथ आर्थिक लाभ भी ले सकते हैं। बैकयार्ड मुर्गीपालन की अच्छी तरह जानकारी हो जाने पर किसान इसे मुख्य व्यवसाय के रूप में भी अपना सकते हैं। मुर्गीपालन में किसी भी प्रकार की समस्या आने पर आप अपने निकटतम कृषि विज्ञान केन्द्र, सरकारी पशुपालन केन्द्र और कृषि विश्वविद्यालय में कुक्कुट रोग विषेशज्ञ से संपर्क कर सही मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

ग्रामीण महिलाओं द्वारा घर के आंगन में मुर्गीपालन

जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य के गौरव का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता है।

– डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

पर्वतीय फल वृक्षों में परागण की समस्या एवं समाधान

कमल कुमार पाण्डे
कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर, बागेश्वर, उत्तराखंड

पर्वतीय क्षेत्रों की कृषि प्रणाली में फलवृक्षों का विशेष महत्व है परन्तु कई प्रकार के फलवृक्षों में आने वाली अल्पफलन की समस्या से किसानों की आय अर्जन पर तो विपरीत प्रभाव पड़ता ही है, स्थान विशेष पर किसी फलवृक्ष की अनुकूलता के बारे में भ्रांतियां भी उत्पन्न होती है। अल्पफलन का एक मुख्य कारण प्रजातियों में परागण की समस्या है, जो आवश्यक परागिक प्रजाति की अनुपस्थिति के कारण उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त बगीचे में परागक कीटों, जैसे मधुमक्खियों, मक्खियों, आदि की कम संख्या भी परागण की समस्या उत्पन्न करती है।

पर्वतीय क्षेत्रों के कुछ फलवृक्ष, जैसे सेब, चेरी, बादाम व नाशपाती ऐसे हैं, जिनमें परागण की समस्या पाई जाती है। अलग–अलग फलों की अलग–अलग प्रजातियों में यह समस्या विभिन्न स्तरों की होती है जिस कारण बगीचे में आवश्यक परागिक किस्म के न होने पर भी वृक्ष में कुछ फल तो आ जाते हैं, पर यह आशातीत उत्पादन से कम ही रहते है। अतः यह आवश्यक है, कि ऐसे फलवृक्षों के रोपण के समय आवश्यक परागिक किस्म तथा मुख्य किस्म के साथ इनके रोपण अनुपात तथा विन्यास का विशेष ध्यान रखें, जिससे आगे चलकर कम–फलत की समस्या का सामना न करना पड़े। क्योंकि ऐसा न करने से प्रति ईकाई उत्पादकता पर तो विपरीत प्रभाव पड़ता ही है, साथ ही किसानों को आर्थिक क्षति के साथ मानसिक कष्ट भी झेलना पड़ता है।

सेब ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों का एक परपरागिक किस्म का फलवृक्ष है। इसकी प्रजातियों को मुख्य रूप से दो वर्गों में बाँटा जाता है; एक मुख्य प्रजातियां है, जिनके फलों का आकार, रंग तथा स्वाद अच्छी गुणवत्ता के होते हैं, परन्तु इन प्रजातियों में विभिन्न स्तरों की परागण समस्या पाई जाती है, जैसे रेड डिलीशियस, स्टारकिंग डिलीशियस, वेन्स डिलीशिया, स्काइलाइन

सुप्रीम, ओरीगन स्पर, रेड चीफ, स्कारलेट गाला, रेड स्पर, टोप रेड, चौबटिया प्रिन्सेज़, फेनी तथा दूसरी परागक प्रजातियां हैं। यद्यपि इन परागक प्रजातियों के फलों की गुणवत्ता मुख्य प्रजातियों की तुलना में कुछ निम्न स्तर की हो सकती हैं, परन्तु मुख्य प्रजातियों से अच्छा उत्पादन लेने के लिये बगीचे में एक निश्चित अनुपात तथा विन्यास में इनकी उपस्थिति अनिवार्य है। परागक प्रजातियों की विशेषता यह है, कि इनके पुष्पों में अत्यधिक मात्रा में सजीव परागकण होते हैं, जो मुख्य प्रजातियों के पुष्पों में निषेचन हेतु उपयुक्त होते हैं, जैसे; गोल्डन डिलीशियस, मेकइनटोस, रेड गोल्ड, टिडमेन–अर्ली वरचेस्टर, अर्ली सनबरी।

परिपक्वता समयानुसार सेब की प्रजातियों को तीन श्रेणियों में बांटा जाता है; पहली– शीघ्र तैयार होने वाली; दूसरी– मध्य में तैयार होने वाली; तथा तीसरी– देर से तैयार होने वाली। अतः यह आवश्यक है कि समय विशेष में तैयार होने वाली मुख्य प्रजातियों के साथ उपयुक्त परागक प्रजातियों का रोपण किया जाये। उत्तराखण्ड के जलवायु परिदृश्य के आधार पर परिपक्वता समयानुसार मुख्य प्रजातियों हेतु सम्बन्धित परागक प्रजाति का चयन इस प्रकार करना चाहिए कि शीघ्र तैयार होने वाली मुख्य प्रजातियों जैसे फैनी, बिनौनी, चौबटिया प्रिंसेज के साथ परागक प्रजातियों के रूप में अर्ली सनबरी तथा टिटमेन अर्ली वरचेस्टर का रोपण किया जाये। इसी प्रकार मध्य अवधि में तैयार होने वाली मुख्य प्रजातियों रेड डिलीशियस, स्टारकिंग डिलीशियस, रिच–ए–रेड, ओरेगन स्पर, रेड स्पर तथा टॉप रेड के साथ परागक प्रजातियों के रूप में गोल्डन डिलीशियस, जोनाथन, मेकइन्टॉस तथा रेड गोल्ड का चयन करना चाहिये तथा देर से तैयार होने वाली राइमर प्रजाति के साथ बकिंघम का रोपण करना चाहिये।

अलग–अलग स्थानों पर परागक कीटों मधुमक्खी की संख्या, फूल आने की स्थिति में मौसम का स्वभाव, बगीचे के आस–पास की वनस्पति का प्रकार, आदि के आधार पर 2 से 3 परागक किस्मों का रोपण 15 से 33 प्रतिशत तक करना चाहिये। 15 प्रतिशत परागक किस्मों हेतु एक पंक्ति छोड़कर दूसरी पंक्ति में प्रत्येक तीसरा पौधा परागक किस्म होगा; इसी प्रकार 20 प्रतिशत हेतु एक पंक्ति छोड़कर दूसरी पंक्ति में प्रत्येक दूसरा पौधा परागिक किस्म का होगा तथा 33 प्रतिशत हेतु प्रत्येक पंक्ति में प्रत्येक तीसरा पौधा परागिक किस्म का होगा।

नाशपाती की भी अधिकांश प्रजातियों में विभिन्न स्तर की परागण समस्या पायी जाती है। अतः नाशपाती का बगीचा लगाते समय 3 से 4 प्रजातियों को मिश्रित रूप से लगाना चाहिये। फेल्मिस ब्यूटी तथा विलयम पियर स्वउत्पादक प्रजातियां है जो अन्य प्रजातियों में परागण हेतु भी उपयुक्त हैं।

बादाम में भी कम फलत का मुख्य कारण एक प्रजाति हेतु आवश्यक दूसरी प्रजाति की अनुपलब्धता होता है। शोध द्वारा फल उत्पादन हेतु प्रजातियों की परस्पर ग्राह्यता के आधार पर प्रजाति वर्ग बनाये गये हैं, जैसे नॉन परेल, पीयरलेस तथा नी प्लस अल्ट्रा प्रजातियों को एक साथ लगाना चाहिये।

चेरी में परागण की समस्या अत्यधिक दिखाई देती है। अतः नये बगीचे लगाते समय सार्वभौमिक परागदाता प्रजातियों जैसे स्टिला, विस्ता, सेनिका तथा वेगा को अन्य प्रजातियों के साथ मिश्रित रूप में अवश्य ही लगाना चाहिये।

यदि रोपण के समय जानकारी के अभाव में परागिक किस्मों का ध्यान न रखा जाये, तो बगीचा स्थापित हो जाने के बाद अल्पउत्पादक बन जाता है। ऐसे बगीचों को भी कुछ वैकल्पिक उपायों द्वारा उत्पादक बनाया जा सकता है; जैसे,

पुष्प गुलदस्ते द्वारा: इसके लिये ग्राह्य परागिक किस्म के फूलों का गुलदस्ता 2 प्रतिशत चीनी के घोल में बनाकर मुख्य किस्म के वृक्षों में फूलों के पास टाँग देना चाहिये। इस उपाय को करने में दो मुख्य बाधायें हैं, एक; कार्य श्रम साध्य है तथा दूसरा इससे परागिक किस्म के फलों का नुकसान भी होता है। इसके अतिरिक्त यदि किसी किसान के पास परागिक किस्म उपलब्ध नहीं है, तो अन्य व्यक्ति अपने बगीचों से पुष्प काटने पर अनिच्छा व्यक्त करते हैं। अतः इस उपाय का प्रयोग व्यवसायिक

रूप से न करके, प्रजातियों की परस्पर ग्राह्यता जानने हेतु करना चाहिये। यदि जंगली सेब (मैलस बकाटा, स्नो ड्रिफ्ट व मेनचुरियन) के वृक्ष उपलब्ध हों तो इनसे शाखाओं सहित पुष्प लेकर सेब की मुख्य प्रजातियों हेतु गुलदस्ते लगाकर प्रयोग कर सकते हैं।

टॉप वर्किंग: टॉप वर्किंग परागण की समस्या निदान का प्रभावी तरीका है। इसके लिये किसानों को निकटतम कृषि विज्ञान केन्द्रों या कृषि शोध संस्थानों से सम्पर्क कर यह जानना चाहिये, कि उसके द्वारा लगाई गई प्रजाति के लिये कौन सी परागक प्रजाति उचित है। जानकारी न होने पर गुलदस्ता स्थापित कर ग्राह्य प्रजातियों का पता लगाया जा सकता है। इसके उपरान्त बगीचे के कुछ वृक्षों की शाखाओं को काटकर उनमें उपयुक्त किस्म की कलम चढ़ा देनी चाहिये।

प्रजातियों के चयन एवं रोपण के अतिरिक्त भली–भाँति परागण हाने के लिये बगीचे में आवश्यक परागक कीटों की संख्या का होना भी आवश्यक है। अतः कीटनाशकों का अनावश्यक प्रयोग नहीं किया जाना चाहिये तथा छिड़काव हमेशा शाम के समय करना चाहिये क्योंकि इससे परागक कीटों का कम नुकसान होता है। यदि पुष्प आने की अवस्था में प्रति हैक्टेयर 5 से 7 मधुमक्खी के बक्से रखते हैं तो परागण की समस्या दूर हो सकती है। इसके साथ–साथ पर्वतीय क्षेत्रों में प्राचीन काल से घर में ही मधुमक्खी के पालन हेतु जाला बनाने की परम्परा को भी आगे बढ़ाया जाये जिससे उचित संख्या में परागक कीट उपलब्ध रहें तथा शहद का लाभ भी मिल सकें।

इस प्रकार यदि नया बगीचा लगाते समय परागण की समस्या को ध्यान में रखकर परागिक किस्मों को उचित अनुपात में लगाऐं तथा परागक कीटों का संरक्षण करें, तो भविष्य में अल्पफलन की समस्या का सामना नहीं करना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त यदि किसी स्थापित बगीचे में अल्पफलन की समस्या हो, तो बताये गये उपायों द्वारा उन्हें उत्पादक भी बनाया जा सकता है।

हिन्दी का प्रचार और विकास कोई रोक नहीं सकता।

– पं. गोविन्द बल्लभ पंत

हृदय की कोई भाषा नहीं है, हृदय-हृदय से बातचीत करता है और हिन्दी हृदय की भाषा है।

– महात्मा गांधी

कृषि उत्पादन में जैव उर्वरकों की महत्ता एवं उपयोग

मेदनी प्रताप सिंह, नवल किशोर सिंह एवं हरीश चन्द्र जोशी
कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर, बागेश्वर, उत्तराखंड

फसलों द्वारा भूमि के लिए प्रयोग किए जाने वाले प्राथमिक मुख्य पोषक तत्वों नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश में से नत्रजन का सर्वाधिक अवशोषण होता हैं, क्योंकि इस तत्व की सर्वाधिक आवश्यकता होती है। इतना ही नहीं, भूमि में डाले गए नत्रजन का 40–50 प्रतिशत ही फसल उपयोग कर पाती है और शेष भाग या तो पानी के साथ बह जाता है या वायुमंडल में मिल जाता है या जमीन में ही स्थायी बंधक हो जाता है। अन्य पोषक तत्वों की तुलना में भूमि में उपलब्ध नत्रजन की मात्रा न्यून स्तर की होती है। यदि प्रति किलोग्राम पोषक तत्व की कीमत की ओर ध्यान दें, तो नत्रजन ही सबसे अधिक कीमती है। अतः नत्रजनयुक्त उर्वरक के एक–एक दाने का उपयोग मितव्ययता एवं सावधानी से करना आज की अनिवार्य आवश्यकता हो गयी है।

वर्तमान परिस्थितियों में नत्रजनयुक्त उर्वरकों के साथ–साथ नत्रजन के वैकल्पिक स्रोतों का उपयोग न केवल आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि मृदा की उर्वराशक्ति को अक्षुण्ण रखने की भी आवश्यकता है। ऐसी स्थिति में जैव उर्वरकों एवं सांद्रिय पदार्थों के एकीकृत उपयोग की नत्रजन उर्वरक के रूप में प्रयोग करने की अनुशंसा की गयी है।

सभी प्रकार के पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए मुख्यतः 16 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, जिनमें नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश अति आवश्यक तत्व हैं। यह पौधों को तीन प्रकार से उपलब्ध होती हैः रासायनिक खाद, गोबर की खाद, नत्रजन स्थिरीकरण एवं फॉस्फोरस घुलनशील जीवाणु द्वारा।

प्राकृतिक रूप से मिट्टी में कुछ ऐसे जीवाणु पाए जाते हैं जो वायुमंडलीय नत्रजन को अमोनिया में और स्थिर फॉस्फोरस को उपलब्ध अवस्था में बदल देते हैं। जैव उर्वरक ऐसे ही जीवाणुओं का उत्पाद है, जो पौधों में नत्रजन एवं फॉस्फोरस आदि की उपलब्धता बढ़ाता है।

प्रमुख जैविक खादः प्रमुख जैविक खादों में राइजोबियम, एजोटोबेक्टर, एजोस्पाइरिलम, फास्फोटिका और नील हरित शैवाल, इत्यादि महत्वपूर्ण हैं।

राइजोबियमः यह खाद एक नमी धारक पदार्थ एवं जीवाणु का मिश्रण है, जिसके प्रत्येक ग्राम भाग में 10 करोड़ से अधिक राइजोबियम जीवाणु होते हैं। अलग–अलग फसल के लिए अलग–अलग प्रकार के राइजोबियम जैव उर्वरक का प्रयोग होता है। राइजोबियम जैव उर्वरक से बीज उपचार करने पर ये जीवाणु खाद से बीज पर चिपक जाते हैं। बीज अंकुरण पर ये जीवाणु जड़, मूल रोम द्वारा पौधों की जड़ों में प्रवेश कर जड़ों पर ग्रंथियों का निर्माण करते हैं। ये ग्रंथियां नत्रजन स्थिरीकरण इकाइयों तथा पौधों की बढ़वार व इनकी संख्या पर निर्भर करती है। अधिक ग्रंथियों के होने पर पैदावार भी अधिक होती है। जैव उर्वरक मूंग, उड़द, अरहर, चना, मटर, मसूर, मूंगफली, सोयाबीन, रिजका, बरसीम एवं सभी प्रकार की बीन में प्रयोग किये जाते हैं।

प्रयोग विधिः राइजोबियम खाद का प्रयोग करने के लिए 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर से 10 किग्रा. बीज उपचारित कर सकते हैं। 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर लगभग 500 मिली. पानी में डालकर घोल बना लें। बीजों को किसी साफ सतह पर इकट्ठा कर जैव उर्वरक के घोल को बीजों पर धीरे–धीरे डालें और हाथ से तब तक उलटते–पलटते जाएं जब तक कि सभी बीजों पर जैव उर्वरक की समान परत न बन जाए अथवा 100–200 ग्राम गुड़ 1 लीटर पानी में मिलाकर आग पर 10 मिनट पका लें और घोल गाढ़ा हो जाने पर नीचे उतारकर ठंडा कर लें। अब इसमें बीजों को मिलाकर उलटते–पलटते जाएं, ताकि बीजों पर जैव उर्वरक की समान परत चिपक जाएं। उपचारित बीजों को किसी छायादार स्थान पर फैलाकर 10–15 मिनट तक सुखा लें और तुरंत बुवाई कर दें।

लाभः इसके प्रयोग से 10 से 30 किग्रा. रासायनिक नत्रजन की बचत होती है। इसके प्रयोग से फसल की उपज में 10 से 20 प्रतिशत की वृद्धि होती है। राइजोबियम जीवाणु कुछ हार्मोन एवं विटामिन भी बनाते हैं, जिससे पौधों की बढ़वार अच्छी होती है और जड़ों का विकास भी अच्छा होता है। इन फसलों के बाद बोई जाने वाली फसलों में भी भूमि की उर्वराशक्ति अधिक होने से पैदावार अधिक मिलती है।

एजोटोबैक्टरः यह जीवाणु असहजीवी है तथा ये पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वंतत्र रूप से रहते हुए वायुमण्डल की नत्रजन को अवशोषित कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इस उर्वरक का प्रयोग सभी अनाजों जैसे– धान, गेंहू, मक्का, ज्वार, जौं, बाजरा आदि एवं सब्जियों जैसे– गोभी, बैंगन, टमाटर, मिर्च, प्याज, मूली, भिण्डी आदि तथा तिलहनी फसलों जैसे– सरसों, सूरजमुखी आदि एवं गेंदा, डहेलियों, गुलदाउदी आदि फूलों में होता है। एजोटोबैक्टर के अतिरिक्त नत्रजन उपलबध कराने वाले जीवाणुयुक्त कुछ जैव उर्वरक जैसे एजोस्पाइरिलम तथा एसिटोबैक्टर का भी देश में उत्पादन सीमित है। कुछ कवकयुक्त जैव उर्वरक जैसे एस्परजिलस एवं पेनीसिलियस, माइकोराइजी एवं अजोला फर्न आदि भी पौधों को नत्रजन उपलब्ध कराते हैं, परन्तु हमारे देश में इनका सीमित उत्पादन होने के कारण प्रचलन बहुत कम है।

प्रयोग विधिः इसके प्रयोग से फसलों की 10 से 20 प्रतिशत तक पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है तथा फलों एवं दानों का प्राकृतिक स्वाद बना रहता है। इसके प्रयोग करने से 20 से 30 किग्रा. नत्रजन की बचत भी की जा सकती है। इसके प्रयोग करने से अंकुरण शीघ्र और स्वस्थ होता है तथा जड़ों का विकास अधिक एवं शीघ्र होता है। फसलें भूमि से फॉस्फोरस का अधिक प्रयोग कर लेती हैं, जिससे कल्ले अधिक बनते हैं। इन जैव उर्वरकों के जीवाणु बीमारी फैलाने वाले रोगाणुओं का दमन करते हैं, जिससे फसलों का बीमारियों से बचाव होता है तथा पौधों मे रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। ऐसे जैव उर्वरकों का प्रयोग करने से जड़ों एवं तनों का अधिक विकास होता है, जिससे पौधों में तेज हवा, अधिक वर्षा एवं सूखे की स्थिति को सहने की क्षमता बढ़ जाती है।

फॉस्फोटिका: इसी प्रकार फॉस्फोटिका जैव उर्वरक भी स्वतंत्रजीवी जीवाणु का एक नम चूर्ण रूप उत्पाद है। इसके एक ग्राम में लगभग 10 करोड़ जीवाणु होते हैं। यह जैव उर्वरक प्रयोग करने से मृदा में उपस्थित अघुलनशील फॉस्फोरस घुलनशील अवस्था में जीवाणुओं द्वारा बदल दी जाती है।

साधारणतया मृदा में भी उपरोक्त प्रकार के जीवाणु होते हैं परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि मृदा में उपस्थित जीवाणु सूक्ष्म एवं असरकारक हों। अतः कल्चर के माध्यम से किसानों को असरकारक जीवित पदार्थ या जीवाणु उपलब्ध कराए जाते हैं। फॉस्फोटिका जीवाणु खाद के प्रयोग करने से 10 से 20 प्रतिशत पैदावार में बढ़ोतरी के साथ–साथ मिट्टी मे उपलब्ध फॉस्फोरस की 30 से 50 प्रतिशत की बचत की जा सकती है। जड़ों का विकास अधिक होता हैं, जिससे पौधा स्वस्थ बना रहता है।

सावधानियां: जीवाणु खादों के प्रयोग करते समय कुछ सावधानियां बरतनी चाहिए, चूंकि राइजोबियम जीवाणु फसल विशिष्ट होता है। अतः पैकेट पर लिखी फसल में ही प्रयोग करें। जैव उर्वरक को धूप व गर्मी से दूर किसी सूखी एवं ठंडी जगह में रखें। जैव उर्वरक या जैव उर्वरक उपचारित बीजों को किसी भी रसायन या रसायनिक खाद के साथ न मिलाएं। यदि बीजों पर फंफूदीनाशक का प्रयोग करना हो, तो बैक्टिन का प्रयोग करें। यदि तांबा एवं पारायुक्त रसायन का प्रयोग करना हो, तो बीजों को पहले फफूंदीनोशक से उपचारित करें तथा फिर जैव उर्वरक की दुगनी मात्रा से उपचारित करें। जैव उर्वरक का प्रयोग पैकेट पर लिखी अंतिम तिथि से पहले कर लेना चाहिए।

नील हरित शैवाल: मिट्टी के सदृश्य सूखी पपड़ी के टुकड़ों के रूप में होते हैं। यह धान की फसल के लिए, जिनमें कि पानी भरा रहता है, लाभकारी होता है। ये सूक्ष्म जीवाणु 20 से 30 किग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टेयर उपलब्ध कराने में तथा 10 से 15 प्रतिशत फसल की पैदावार बढ़ाने में सक्षम होते हैं। इनके प्रयोग से लगभग 30 प्रतिशत तक रासायनिक उर्वरकों की बचत की जा सकती है।

जैव कीटनाशक: इसमें सर्वप्रथम नीम के तेल का नाम आता है। नीम के तेल को कीटनाशक के रूप में प्रयोग करने से कीटों के जीवनचक्र में बाधा आती है। नीम तेल में पाए जाने वाले सक्रिय तत्व कीटों में कायान्तरण के लिए उपयोगी हार्मोन के स्राव को रोकते हैं, जिससे कीटों की अगली अवस्था नहीं बन पाती है। फलस्वरूप उनका जीवनचक्र रूक जाता है, जिसके कारण कीटों की वृद्धि नहीं हो पाती है। नीम तेल में पाए जाने वाले आजाडीरेक्टीन, सेलेमिन तथा मेलिनेन्ड्रीयोल के कारण कीटों के आमाशय में तरंगें जैसी स्थिति का आभास होता है। अतः कीट पौधों को नहीं खाते, नीम के तेल का सबसे अधिक प्रभाव कुतरने, चबाने तथा चूसने वाले कीटों पर पड़ता है। एक अध्ययन के अनुसार नीम तेल या नीम उत्पादों का पौधों, जंतुओं, स्तनधारियों एवं पक्षियों आदि पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

इसे तैयार करने के लिए 5 ग्राम डिटरजेंट पाउडर को 1 लीटर पानी में भली भांति घोल लें। अब इस 1 लीटर घोल में 50 मिली. नीम तेल मिलाकर अच्छी तरह घोलकर तरल तैयार कर लें। तैयार घोल को 9 लीटर पानी में मिला दें। इस तरह 10 लीटर कीटनाशक तैयार हो जाता है। इसे 8–10 घंटे के अंदर सुबह अथवा शाम के समय पौधों पर छिड़कें। सर्दियों में 10 दिन व वर्षा तथा गर्मी में इसे 5 दिनों के अंतराल पर पुनः छिड़कें।

उपरोक्त के अलावा नीम की खली एक अच्छी जैविक खाद है। इसमें एजाडिरेक्टीन 600 पी.पी.एम., नत्रजन 2–5 प्रतिशत, फॉस्फोरस आधा से एक प्रतिशत, पोटेशियम 1.67 प्रतिशत, कैल्शियम एक प्रतिशत तथा मैग्नीशियम 0.75 प्रतिशत पाई जाती है। इस तरह इसके उपयोग से पौधों को उर्वरक तो मिलता है साथ ही साथ एजाडिरेक्टीन होने के कारण मृदा में सूत्रकृमि, दीमक, जीवाणु–विषाणु हानिकारक फफूंदी आदि का भी नियंत्रण होता है। इसके प्रयोग से भूमि में नत्रजन उपयोग की क्षमता भी बढ़ती है।

नीम की पत्ती का भी कीटनाशक बनाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इसे बनाने के लिए 10 लीटर गौमूत्र को एक मिट्टी के बर्तन में रखें तथा उसमें 2.5 किग्रा. नीम की पत्ती डालें और इसे 15 दिन तक

सड़ने दें। 15 दिन बाद सूती कपड़े से छानकर पत्ती को अलग कर लें तथा प्राप्त घोल को 50 लीटर पानी में मिलाकर सुबह अथवा शाम के समय पौधों पर छिड़काव करें। छिड़काव संपूर्ण पौधे पर 10–10 दिन के अंतराल पर करें। इसी प्रकार नीम गिरी का सत् बनाने के लिए सुखाए गए बीजों से छिलकों को पृथक कर लें। अब बीज को पीसकर पाउडर बना लें। 40–50 ग्राम पाउडर को सूती कपड़े की पोटली में बांधकर 500 से 700 ग्राम पानी में रातभर के लिए रखें। दूसरे दिन पोटली को पानी में खूब हिलाकर उसके रस को पानी में मिल जाने दें। इस प्रकार प्राप्त रस को एक लीटर पानी में मिलाएं। अब इसमें चिपकने वाले पदार्थ जैसे साबुन घोल/डिटरजेन्ट आधा चम्मच मिलाएं। तैयार घोल का सुबह या शाम प्रभावित फसल पर छिड़काव करें। नीम उत्पादों का प्रकृति में पाए जाने वाले जीव–जन्तुओं जैसे पक्षी, वन्य जीवों, मित्र कीटों, मकड़ी, तितली, लेडी बग, मधुमक्खी, परागकर्ता, आदि पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। नीम की पत्तियों एवं खली से शोधित मिट्टी में उपस्थित केंचुआ की बढ़वार एवं उनकी मृत्यु पर भी इसका कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है।

उपचार : जैविक खादों से पौध जड़ उपचार के लिए 1–2 किग्रा. जैव उर्वरक का 10–20 लीटर पानी में घोल बनायें। 10–12 किग्रा. बीज द्वारा प्राप्त पौधों की जड़ को 10–15 मिनट के लिए इस घोल में डुबायें। उपचारित पौधे की तुरंत रोपाई कर दें। जैविक खादों से कंद उपचार के लिए 2–3 किग्रा. जैव उर्वरक का 40–60 किग्रा. खेत की मिट्टी या सड़ी कम्पोस्ट, कम्पोस्ट खाद में मिश्रण तैयार करें। तैयार मिश्रण को एक एकड़ खेत में बुवाई के समय एक समान बिखेरकर मिट्टी में मिला दें।

जैव उर्वरकों से लाभ

- इनके प्रयोग से बीजों का अंकुरण शीघ्र एवं जड़ों का विकास अच्छा होता है।
- जैव उर्वरक पौधों की वृद्धि में सहायक पोषक तत्व, विटामिन व हारमोन, आदि भी प्रदान करते हैं।
- भूमि में लाभदायक जीवाणु की संख्या में वृद्धि एवं भूमि की संरचना में सुधार कर उपजाऊ शक्ति को बढ़ाते हैं।
- इनके प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों की बचत होती है तथा फसल उत्पादन बढ़ता है।
- जैव उर्वरक उपचारित पौधों में रोगों से लड़ने की शक्ति अधिक होती है।
- सभी जैव उर्वरक पर्यावरण के मित्र हैं। इनके प्रयोग से किसी प्रकार की हानि नहीं होती है।

इस प्रकार किसान जैव उर्वरकों का प्रयोग दलहनी, तिलहनी, खाद्यान्न एवं सब्जी फसलों में करके कम उत्पादन लागत में गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त करके अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं तथा पर्यावरण को भी सुरक्षित रख सकते हैं।

"जैविक खेती, कृषि आधार,
स्वच्छ पर्यावरण, उत्तम आहार,
धरती करणैं यह पुकार, जैविकैल करो म्यर उपचार,
जन, जंग, जमीन उत्तराखण्ड की पहचान,
अपनायें जैविक खेती, बनाये राज्य महान,
धरती की है यह पुकार, जैविक विधि से करो सुधार"।

रफ लेमन प्रसंस्करण एवं मूल्यवर्धन

निधि सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, काफलीगैर, बागेश्वर, उत्तराखंड

भारतवर्ष में उगाये जाने वाले फलों में नीम्बू एक महत्वपूर्ण फल है। उत्पादन की दृष्टि से नीम्बू का आम तथा केले के बाद तीसरा स्थान है। भारत में आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, पूर्वोत्तर राज्यों, पंजाब तथा उड़ीसा के अलावा मध्य प्रदेश में भी नीम्बूवर्गीय फसलों का उत्पादन किया जाता है। हमारे देश में लगभग 923.2 हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल में नीम्बूवर्गीय फसलें उगाई जाती हैं तथा प्रतिवर्ष 8607.7 हजार मीट्रिक टन नीम्बू/संतरों का उत्पादन किया जाता है। भारत वर्ष में नीम्बू की कई सारी प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इन्हीं में से एक है रफ लेमन (*सिट्रस जाम्भीरी* लश)। ये प्रजाति नीम्बू की जंगली प्रजातियों में से एक है जिसका मूल स्थान भारत है तथा यह रूटेसी परिवार का सदस्य है। पूरे देश में इसे अलग–अलग नामों, जैसे खट्टा जामिर, सोह झलिया, सिन्दूरी, तथा नीम्बू टेंगा, इत्यादि नामों से जाना जाता है। इसके पेड़ का उपयोग मीठे संतरे, मंदारिन संतरे तथा ग्रेप फ्रूट में रूट स्टॉक की तरह भी किया जाता है।

रफ लेमन के उपयोग

संतरे तथा नीम्बू के रस का उपयोग घर पर तांबे के बर्तन साफ करने तथा कपड़ों में लगे दागों को हटाने में किया जाता है। इसके अलावा इसका उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों जैसे फेस क्रीम, फेस वाश तथा फेस मास्क, आदि को बनाने में भी किया जाता है। नीम्बू के छिलकों को सुखाकर पशुचारे की तरह भी इस्तेमाल में लाया जाता है। संतरे तथा नीम्बू का जूस मूत्रवर्धक, रक्तशोधक, ज्वरनाशक तथा रोगरोधक जैसे अनेक औषधीय गुणों से भरपूर है। इनका उपयोग कई प्रकार के उत्पादों जैसे पेय, मार्मलेड, जैम, जैली तथा औषधीय उत्पाद बनाने में किया जाता है। उत्तराखण्ड में रफ लेमन के वृक्ष दिसम्बर से फरवरी तक फलों से लदे रहते हैं। इसके जूस में एसिड की मात्रा 4.4 प्रतिशत पायी जाती है तथा इसका जूस निकालने के कुछ देर के

उपरान्त कड़वा हो जाता है, इसलिये अच्छी पैदावर के उपरान्त भी इसे उपभोक्ताओं के द्वारा कम पसन्द किया जाता है। इसी कारण इसके जूस को प्रसंस्कृत कर मूल्यवर्धित उत्पाद में बदलने की आवश्यकता है। रफ लेमन के जूस का उपयोग कर निम्न उत्पाद तैयार किये जा सकते हैं।

रफ लेमन आर.टी.एस. (रेडी टू सर्व) : यह रेडी–टू–सर्व पेय है तथा इसे आसानी से घर पर ही तैयार किया जा सकता है। रफ लेमन से आर.टी.एस. तैयार करने के लिये 10 प्रतिशत रफ लेमन का जूस तथा 13 प्रतिशत कुल घुलनशील शर्करा की आवश्यकता होती है। आर. टी.एस. बनाने की विधि निम्न प्रकार है।

आवश्यक सामग्री

रफ लेमन जूस–500 मिली.
चीनी –1.3 किग्रा.
पानी की मात्रा – 8.2 ली.
रफ लेमन का छना हुआ जूस

⇩

चीनी+ पानी+ रफ लेमन जूस को अच्छी तरह मिलाएं

⇩

एकसार होने दें

⇩

बोतल में भर कर सीलबन्द कर दें

⇩

तत्पश्चात 90 डिग्री सेन्टीग्रेट पर 25 मिनट तक पाश्च्युरिकृत करें

⇩

ठंडा होने दें

⇩

भण्डारित कर लें

रफ लेमन स्क्वैश: इस पेय में 25 प्रतिशत फलों का जूस या गूदा तथा 40 से 50 प्रतिशत कुल घुलनशील शर्करा एवं 350 पी.पी.एम. सल्फर डाईआक्साइड का इस्तेमाल किया जाता है। स्क्वैश को पीने से पूर्व पानी में घोलना अनिवार्य है।

आवश्यक सामग्री

रफ लेमन जूस –1 ली.
चीनी – 2.0 किग्रा.
पानी की मात्रा – 1.0 ली.
पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट– 2.5 ग्रा.
रफ लेमन का छना हुआ जूस

⇩

चीनी तथा पानी को घुलने तक गरम करें

⇩

छान दें

⇩

जूस तथा चीनी के घोल को मिलायें

⇩

प्रीज़रवेटिव के.एम.एस. 0.6 ग्रा./ली. स्क्वैश की दर से मिलायें

⇩

बोतल में भर कर सीलबन्द कर दें

⇩

भण्डारित कर लें

रफ लेमन कार्डियल: रफ लेमन से चमकदार, साफ एवं मीठा फ्रूट जूस कार्डियल भी बनाया जा सकता है। इसे बनाने हेतु कम से कम 25 प्रतिशत फलों का जूस, 30 प्रतिशत कुल घुलनशील शर्करा तथा 350 पी.पी.एम. सल्फर डाईऑक्साइड की आवश्यकता होती है। रफ लेमन से कार्डियल बनाने की विधि निम्नवत है।

रफ लेमन का 1 लीटर छना हुआ जूस

⇩

प्रिज़रवेटिव के.एम.एस. 1.0 ग्रा./लीटर जूस की दर से मिलायें

⇩

काँच के मर्तबान में 10–15 दिनों तक रख दें

⇩

साफ जूस को निथार कर अलग कर लें

⇩

छान कर माप लें

⇩

चीनी का घोल तैयार कर लें

⇩

जूस तथा चीनी के घोल को मिलायें

⇩

प्रिज़रवेटिव के.एम.एस. 0.6 ग्रा./ली. कार्डियल में मिलायें

⇩

बोतल में भर कर सीलबन्द कर दें

⇩

ठंडे तथा सूखे स्थान पर भण्डारित कर लें

इस प्रकार रफ लेमन से विभिन्न मूल्य वर्धित उत्पाद बनाये जा सकते हैं जो न केवल रफ लेमन के उत्पादन को बढ़ावा देंगे, वरन् किसान की आय बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होंगे। उत्तराखण्ड के पहाड़ी क्षेत्रों में रफ लेमन की कई प्रजातियाँ पायी जाती हैं, आवश्यकता है तो केवल अच्छे तथा रसदार फलों वाली प्रजाति को पहचान कर उसके संरक्षण की। अनुसंधान के अभाव में रफ लेमन उपेक्षित तथा विलुप्त होने की कगार पर है। औषधीय गुण विद्यमान होने के उपरान्त भी इसका उपयोग केवल ग्रामीण इलाकों में दैनिक उपभोग तक सीमित है। व्यापारिक दृष्टि से रफ लेमन का उपयोग न के बराबर है।

हिन्दी हमारे देश और भाषा की प्रभावशाली विरासत है।

- माखन लाल चर्तुवेदी

वही भाषा जीवित ओर जागृत रह सकती है, जो जनता का ठीक-ठाक प्रतिनिधित्व करे सके और हिन्दी इसमें समर्थ है।

- पीर मुहम्मद मूनिस

वीएल भट 201 एवं वीएल सोया 89: पर्वतीय क्षेत्रों हेतु भट एवं सोयाबीन की पोषक तत्वों से भरपूर उन्नत प्रजातियां

अनुराधा भारतीय, रेनू सनवाल एवं हेमलता जोशी
भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

तिलहनी फसलें उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में वर्षाश्रित अवस्थाओं के लिए महत्वपूर्ण फसलें है। ये मानव आहार के लिए वानस्पतिक तेल का प्राथमिक स्त्रोत होने के साथ ही प्रोटीन, खनिज और विटामिन का भी बहुमूल्य स्त्रोत हैं। तिलहनी फसलें, नकदी फसलें हैं तथा पर्वतीय क्षेत्रों में प्रचलित फसल प्रणाली की भी महत्वपूर्ण अंग हैं। तिलहन फसलों की कम उपजाऊ मिट्टी में उपजने की क्षमता व कम जल की आवश्यकता के कारण इनका वर्षाश्रित क्षेत्रों में और भी अधिक महत्व है। उत्तर–पश्चिमी हिमालय क्षेत्रों में तिलहन फसलों का उत्पादन 89 हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल में किया जाता है और यहां इसका उत्पादन 67 हजार टन व उत्पादकता 751 किग्रा./है. है, जो राष्ट्रीय उत्पादकता (1247 किग्रा./है.) से काफी पीछे है तथा इस क्षेत्र की खाद्य तेल की आवश्यकता के अनुरूप नहीं है। उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में तिलहनी फसलों में मुख्य रूप से राई–सरसों, सोयाबीन, तिल और मूंगफली उगाई जाती है और इनमें से उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में सोयाबीन एक महत्वपूर्ण खरीफ फसल है, जिसके उच्च गुणवत्तायुक्त प्रोटीन (40%) में आवश्यक अमीनो

अनियमित बढ़वार वाली पारम्परिक काली सोयाबीन (भट)

अम्ल एवं तेल (20%) पर्याप्त मात्रा में अनिवार्य फैटी एसिडयुक्त है। उच्च पोषकता और विभिन्न बायोएक्टिव यौगिक जैसे, एन्थोसायनिन एवं आइसोफ्लेवोन्स की उपस्थिति सोयाबीन को उत्कृष्ट फंक्शनल खाद्य पदार्थ बनाते हैं और इसका प्रयोग विभिन्न बीमारियों, जैसे कैंसर, मधुमेह, औस्टियोपोरोसिस, उक्त रक्तचाप एवं हृदय रोग, आदि की रोकथाम में सहायता करता है। यह पौष्टिक फली मनुष्य के लिए भोजन व मवेशियों के लिए उत्तम चारा देने के साथ ही नत्रजन स्थिरीकरण द्वारा मृदा उर्वरता भी बढ़ाती है। उत्तर–पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में सोयाबीन की खेती 8 (16 हजार है. भट सहित) हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल की जाती है और इसका 8 (16 हजार टन भट सहित) हजार टन उत्पादन प्राप्त होता है जिसमें, उत्तराखण्ड राज्य के क्षेत्रफल में 97 प्रतिशत से अधिक तथा उत्पादन में उत्तराखण्ड का महत्वपूर्ण योगदान है। इसके अतिरिक्त काली सोयाबीन जो 'भट' के नाम से जानी जाती है, पर्वतीय कृषकों द्वारा करीब 6 हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल में बोई जाती है। यह फसल उत्तराखण्ड में पारम्परिक रूप से उगायी जाती है। उत्तराखण्ड की पारम्परिक 'भट' की किस्में कम उत्पादन क्षमता एवं अनियमित बढ़वार, लम्बी व बेलदार प्रकार की हैं और साथ ही इनके बीज आकार में छोटे होते हैं। 'भट' यहाँ के जनमानस के खानपान एवं फसल प्रणाली में पूर्ण रूप से बसी हुई है तथा दाल के रूप में प्रयोग की जाती है। 'भट' को सामान्यतः मंडुवा के साथ मिश्रित रूप में बोया जाता है। 'भट' की अन्य फसलों की तुलना में विपरीत मौसम संबंधी परिस्थितियों को सहन करने की अधिक क्षमता है खासकर, मानसून की देरी होने की अवस्था में। यह खरीफ में उगायी जाने वाली अन्य फसलों से श्रेयस्कर है तथा इस फसल की खेती में कम लागत आती है।

सोयाबीन एवं काली सोयाबीन (भट) की उत्तराखण्ड के ग्रामीण लोगों की पोषण एवं आजीविका सुरक्षा में महत्ता को देखते हुए तथा पर्वतीय क्षेत्रों में इस फसल के उत्पादन स्तर को बढ़ाने के लिए भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा द्वारा काली सोयाबीन की प्रजाति वीएल भट 201 और सोयाबीन की प्रजाति वीएल सोया 89 का विकास कर उसे उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षाश्रित जैविक अवस्थाओं हेतु अनुमोदित किया गया है।

काली सोयाबीन (भट) की प्रजाति वीएल भट 201 को स्थानीय जनद्रव्य वीएचसी 3071 से चयनित कर विकसित किया गया है। उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों की वर्षाश्रित अवस्थाओं में वीएल भट 201 की औसत उपज क्षमता 1,642 किग्रा./है. है, जो मानक किस्म वीएल भट 65 (1,058 किग्रा./है.) से 55.2 प्रतिशत अधिक है। अखिल भारतीय समन्वित शोध परियोजना के अन्तर्गत, उत्तरी हिमालयी पर्वतीय क्षेत्रों में वीएल भट 201 ने 2,120 किग्रा./है. की उपज दर्शायी जबकि कृषक प्रक्षेत्र परीक्षण में इस प्रजाति की उपज 2,700 किग्रा./है. पायी गयी। यह प्रजाति पोषण की दृष्टि से भी उत्कृष्ट है क्योंकि, इसके बीजों में 41.02 प्रतिशत प्रोटीन एवं 15. 45 प्रतिशत तेल पाया जाता है जो मानक किस्म वीएल सोया 65 से क्रमशः 38.76 प्रतिशत व 10.95 प्रतिशत अधिक है। इसके अतिरिक्त वीएल भट 201 के बीजों में पॉलीफिनाल्स (4.03 किग्रा./100 ग्रा.) की मात्रा काफी अधिक है जिसके कारण इसकी एन्टीआक्सीडेन्टस क्षमता पीली सोयाबीन से अधिक है तथा गुणवत्ता उत्कृष्ट है। वीएल भट 201 प्रजाति के पौधे नियमित बढ़वार, सफेद पुष्प एवं भूरे रोमिल वाले हैं, साथ ही इसके पौधों में फलियों की संख्या पारम्परिक भट की किस्मों से काफी

सोयाबीन की उन्नत प्रजाति वीएल सोया 89

अधिक है। इस प्रजाति में 60–65 फलियां प्रति पौधा लगती हैं, पौधे की ऊँचाई 65–70 सेमी. तथा परिपक्वता 115–120 दिन तक है। वीएल भट 201 (13.12 ग्रा./100 दाने) के दानों का वजन भी मानक प्रजाति वीएल सोया 65 (17.74 ग्रा./100 दाने) से काफी कम है तथा दाने मध्यम आकार के हैं। उत्तराखण्ड में सामान्यतः छोटे चपटे बीज के आकार वाले भट स्थानीय भोजन के रूप में पसंद किये जाते हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में मंडुकाक्ष पर्ण चित्ती सोयाबीन की मुख्य बीमारी है जो उपज में लगभग 35–40 प्रतिशत की कमी लाती है। नई विकसित काली वीएल भट 201 मंडुकाक्ष पर्ण चित्ती, फली झुलसा रोग प्रतिरोधी एवं गर्डल बीटल हेतु मध्यम प्रतिरोधी है। वीएल भट 201 पर्वतीय क्षेत्रों में अच्छी उपज देने में सक्षम है तथा परम्परागत कम उपज क्षमता वाली प्रजातियों का एक उत्कृष्ट विकल्प है।

सोयाबीन की प्रजाति वीएल सोया 89 को वीएल सोया 47X EC 361361 472/जेएस 335 के संकरण से विकसित किया गया है। इस प्रजाति की औसत उपज क्षमता 2,272 किग्रा./है. है एवं इस प्रजाति ने 3 वर्षों में उत्तराखण्ड की जैविक स्थितियों में मानक किस्म वीएल सोया 59 से 10.30 प्रतिशत अधिक उपज दर्शायी। वीएल सोया 89 प्रजाति ने अखिल भारतीय समन्वित शोध परियोजना के अन्तर्गत उत्तर पर्वतीय हिमालयी क्षेत्रों में (अल्मोड़ा, मझेड़ा और पालमपुर) में 2,272 किग्रा./है. की औसत उपज दर्शायी। वीएल सोया 89 के पौधे नियमित बढ़वार के साथ–साथ ज़्यादा फलीदार (80–85 फलियाँ/पौधा) है तथा इस प्रजाति के पौधों की लम्बाई 75–85 सेमी. एवं परिपक्वता अवधि 115–120 दिन है। सोयाबीन की यह प्रजाति पोषक तत्वों (39 प्रतिशत प्रोटीन तथा 18.10 प्रतिशत तेल) में भी उत्कृष्ट है तथा पर्वतीय क्षेत्रों में सोयाबीन में लगने वाले महत्वपूर्ण रोगों जैसे, मडुकांक्ष पर्ण चित्ती एवं फली झुलसा हेतु मध्यम प्रतिरोधी है।

इन उन्नत प्रजातियों को उन्नत कृषि तकनीकों के साथ अपनाकर उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में वर्षाश्रित जैविक अवस्थाओं में तिलहन उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

हिन्दी भाषा एक ऐसी सार्वजनिक भाषा है जिसे बिना भेद-भाव प्रत्येक भारतीय ग्रहण कर सकता है।

– मदन मोहन मालवीय

फल तथा सब्जी प्रसंस्करण की तकनीकें

निधि सिंह एवं देवेन्द्र सिंह कार्की

भाकृअनुप-विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

प्रसंस्करण अथवा प्रोसेसिंग का प्रयोग खाद्य पदार्थों को अधिक समय तक संरक्षित तथा खाने योग्य बनाये रखने के लिए किया जाता है। कैनिंग, डिहाइड्रेशन, परिरक्षण, बोतलबंदी तथा फ्रिजिंग प्रसंस्करण की कुछ प्रमुख तकनीकें हैं। खाद्य पदार्थों के अन्तर्गत हम विभिन्न खाद्य जैसे फल एवं सब्जियां, मांस–मछली, दुग्ध उत्पाद तथा अनाजों को सम्मिलित कर सकते हैं जिनके लिए प्रसंस्करण की आवश्यकता होती है। प्रसंस्करण के कारण हम इनको लम्बे समय तक खाने के लिये प्रयोग में ला सकते हैं। आसान विधियों द्वारा घरेलू स्तर पर भी प्रसंस्करण किया जा सकता है तथा खाद्यों को संरक्षित कर के रखा जा सकता है। फल तथा सब्जियां कटाई/तुड़ाई उपरान्त अतिशीघ्र खराब होने वाले खाद्य हैं जिनके लिये प्रसंस्करण करना एक महत्वपूर्ण चरण है। फल तथा सब्जियों को खराब होने से बचाने के लिये घरेलू स्तर पर कुछ प्रसंस्करण की तकनीकें निम्न प्रकार हैं।

ब्लांचिंग

फल तथा सब्जियों को प्रसंस्करण से पहले 2 से 3 मिनट तक उबलते पानी या भाप द्वारा उपचारित कर तुरन्त ठंडा करना ब्लांचिंग कहलाता है। ब्लांचिंग से ऊतकों में उपस्थित हवा बाहर निकल जाती है तथा एंजाइम की क्रिया धीमी पड़ जाती है। इस प्रकार कटे हुए फल सब्जियों को भूरा पड़ने से बचाया जा सकता है। ब्लांच किये हुये फल सब्जियाँ ताप प्रसंस्करण के दौरान बेहतर ताप हस्तांतरण में भी मदद करता है तथा डिब्बाबन्द उत्पाद की गुणवत्ता को बनाये रखने में भी सहायक है।

सुखाना

फल अथवा सब्जी को धूप में या कृत्रिम रूप से ताप दे कर इतना अधिक सुखाया जाता है कि उसमें जरा भी नमी न रहे। इसके बाद सुखायी गयी सब्जियों को वायुरहित डिब्बों में पैक करके ठंडे स्थान पर रखना चाहिये। इस तरीके से इनको 8–10 महीनों तक आराम से संरक्षित किया जा सकता है। इन्हें सामान्य सब्जी की तरह ही पर्याप्त पानी में पका कर खाया जाता है। सभी पत्तेदार सब्जियों के साथ–साथ गोभी, गाजर, परवल जैसी सब्जियों को भी अच्छी तरह से धोकर इस विधि से सुखा कर रखा जा सकता है। फलियों के बीज निकाल कर सुखाए जाते हैं और मूली, गाजर, फूल–गोभी जैसी सब्जियों को काट कर सुखाया जाता है।

फूलगोभी को संरक्षित करने के लिए पहले इसे अच्छी तरह धो लें, फिर छोटे–छोटे टुकड़ों में काटें, फिर 1 प्रतिशत सोडियम मेटाबाइसल्फाइट मिले उबलते पानी में 4–5 मिनट तक डालकर उपचारित कर लें। इससे रंग सफेद बना रहेगा। टुकडों को प्लेट में फैला कर धूप में सुखा लें। इसी तरह **पत्तागोभी** को संरक्षित करने के लिए

बाहरी पत्तियों को निकालकर बारीक रिंग की तरह काट लें। रिंग को उबलते पानी में 3–4 मिनट तक उबाल लें, फिर 0.2 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट के घोल में 2–3 मिनट तक उपचारित करके ट्रे या थाली में फैलाकर सुखा लें।

गाजर को सुखाने के लिए पहले गाजर को छील कर धो लें, छोटे–छोटे गोल आकार में काटकर 2–3 प्रतिशत नमक के उबलते पानी में 3–4 मिनट तक उपचारित करें, फिर धूप में या मशीन में सुखा कर भण्डारित कर लें।

सुखायी हुई सब्जियों के भण्डारण में सावधानियां

सुखायी हुई सब्जियों में अक्सर कीड़े या फफूंदी लगने की समस्या हो जाती है। इसलिये सुखाये हुए फलों तथा सब्जियों को हवारहित डिब्बों में या पॉलीथीन की थैलियों में सीलबन्द करके रखना चाहिये, जिससे उनमें नमी या हवा प्रवेश न कर सके अन्यथा ये वायुमण्डल से नमी सोखकर, सूक्ष्मजीवों की क्रिया द्वारा खराब होने लगते हैं। इनके भण्डारण में कमरे का तापमान 20 डिग्री से. से अधिक नहीं होना चाहिये।

उबालना

घरेलू विधि से मटर के दानों को संरक्षित करने के लिये किसी बर्तन में पानी भर कर उबलने के लिये रखें। पानी में उबाल आने पर मटर के दानों को पानी में डालकर 2 मिनट ढक कर रहने दें। फिर ऑच बंद कर दें, अब मटर को छलनी में छानकर अतिरिक्त पानी निकाल दें। दूसरे बर्तन में एकदम ठंडा पानी लें व छलनी से निकाले गये मटर के दाने ठंडे पानी में डाल दें तथा मटर के ठंडा होने के बाद, अतिरिक्त पानी हटा लें अब मटर के दानों को पौलीथीन बैग में भरकर बैग को बंद करके फ्रीजर में रख दें।

चीनी द्वारा संरक्षण

शरबत, स्क्वैश, जैम, जैली व मुरब्बे, आदि को शक्कर द्वारा संरक्षित करके रखा जाता है। यदि किसी भी उत्पाद में चीनी की मात्रा 66 प्रतिशत या इससे अधिक हो, तो यह उत्पाद को लम्बे समय तक खराब होने से बचाता है। चीनी के गाढ़े गोल में जीवाणु की कोशिकाओं का परासरण होने के कारण वह पनप नहीं पाते। पर्वतीय क्षेत्रों की बात करें तो प्लम, नाशपाती, आड़ू खुमानी काफी मात्रा में उत्पादित किये जाते हैं। इन सभी फलों से बड़ी आसानी से जैम बनाया जा सकता है। इसके लिये फलों के गूदे को चीनी के साथ गाढ़ा होने तक पकाया जाता है। अलग–अलग फलों के अनुसार चीनी, सिट्रिक एसिड व पानी की मात्रा मिलाई जाती है। यदि नाशपाती का जैम बनाना हो, तो 1 किग्रा. नाशपाती के गूदे में 750 ग्रा. चीनी, 1.5 ग्रा. सिट्रिक एसिड तथा 100 मिली. पानी की मात्रा मिलायी जाती है। इसी प्रकार प्लम के 1 किग्रा. गूदे में 800 ग्रा. चीनी, तथा 150 मिली. पानी की आवश्यकता होती है। आड़ू के 1 किग्रा. गूदे में 800 ग्रा. चीनी, 3.0 ग्रा. सिट्रिक एसिड तथा 100 मिली. पानी पड़ता है जबकि खुमानी के 1 किग्रा. गूदे में 600 ग्रा. चीनी, 1.0 ग्रा. सिट्रिक एसिड तथा 100 मिली. पानी मिलाकर जैम बनाया जाता है।

जैम बनाने में सावधानियाँ

1. जैम बनाने के लिये पूरी तरीके से परिपक्व परन्तु ठोस फलों का चुनाव करना चाहिये।
2. जैम को क्रीस्टलीकरण होने से बचाने के लिये चीनी के साथ कुछ भाग ग्लूकोज या कार्न सीरप का मिलाना चाहिये।
3. जैम को चिपचिपा होने से बचाने के लिये पैक्टिन तथा सिट्रिक एसिड या दोनों का इस्तेमाल साथ में करना चाहिये।
4. जैम को सूक्ष्म जीवों द्वारा खराब होने से बचाने के लिये 90 प्रतिशत से कम नमी वाले स्थान पर भण्डारित करके रखना चाहिये।

नमक, तेल तथा मसालों द्वारा संरक्षण

फल तथा सब्जियों से अचार बनाने के लिये नमक, तेल व मसालों को सही अनुपात में मिलाना आवश्यक है। ज़्यादातर अचार नमक द्वारा संरक्षित करके रखे जाते हैं क्योंकि नमक जीवाणुओं के लिए विष का काम

करता है, साथ ही नमक की अधिकता से जीवाणुओं की कोशिकाओं का विदारण भी हो जाता है। 15 प्रतिशत या इससे अधिक नमक की मात्रा का उपयोग कर उत्पाद को संरक्षित करके रखा जा सकता है।

अचार बनाने में सावधानियाँ

1. फल तथा सब्जियों से अचार बनाने के लिये 15 प्रतिशत से अधिक नमक का उपयोग करना चाहिये जिससे सूक्ष्मजीवों की वृद्धि बाधित होती है।
2. अचार में सिरके की 2 प्रतिशत मात्रा मिलाने से इसे लम्बे समय तक खराब होने से बचाया जा सकता है।
3. अचार तैयार करने में फल तथा सब्जियों को डूबने भर तेल में नमक तथा मसालों के साथ मिलाकर करना चाहिये।

रसायनों के उपयोग द्वारा फल तथा सब्जियों का संरक्षण

1. **सोडियम बेंज़ोएट**– इस रसायन का प्रयोग खट्टे स्वाद वाले जैम, जैली और स्क्वैश में किया जाता है। इसको 1 किग्रा. में 1 ग्राम की दर से गरम खाद्य पदार्थ में मिलाया जाता है। इसे पानी में घोलने से बेंजोइक अम्ल प्राप्त होता है, जिसकी उपस्थिति में जीवाणु नहीं पनप पाते।
2. **पोटेशियम मेटाबाईसल्फाइट**– इसे फलो के रसों को संरक्षित करने के लिये प्रयोग में लाया जाता है। इस रसायन को रस के एकदम ठंडा हो जाने के बाद थोड़े से रस में घोलकर मिलाया जाता है। यह फलों के रंग को उड़ा देता है, इसलिए अनार, जामुन व फालसे जैसे रंगीन फलों के रस को संरक्षित करने के लिए इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। यह 5 क्रिग्रा. में 3 ग्राम की दर से पड़ता है। इसे पानी में घोलने से SO_2 गैस का निर्माण होता है, जिससे जीवाणु नहीं पनप पाते।
3. **एसिटिक एसिड**– इसका प्रयोग चटनी, अचार, सॉस, आदि बनाने में किया जाता है। 1 किग्रा. में 1 छोटा चम्मच एसिटिक एसिड डाला जाता है। सिरके में लगभग 4.5% एसीटिक एसिड होता है, इसलिए इसके द्वारा कई अचार सुरक्षित रहते हैं।

प्रिज़रवेटिव्स के इस्तेमाल में सावधानियाँ

- प्रिज़र्वेटिव को खाद्य पदार्थ में मिलाने से पहले थोड़े पानी में घोल कर रस में अच्छी तरह मिलाना चाहिए, वरना यह प्रभावशाली नहीं रहता है।
- प्रिज़र्वेटिव को शीशी में बंद करके ठंडी व अंधेरी जगह में रखना चाहिए।
- रासायनिक पदार्थों या प्रिज़र्वेटिव को मिलाने के पश्चात् रसों को शीघ्र ही बोतलों में भर कर बंद कर देना चाहिए।
- इसको हमेशा माप के अनुसार ही इस्तेमाल करें। जरूरत से ज्यादा पड़ जाने पर खाद्यों का स्वाद बिगड़ जाता है और यदि कम हो, तो प्रभावशाली नहीं रहता।
- प्रिज़र्वेटिव मिलाने के उपरान्त स्टेर्लाइज़्ड बोतलों में ही पदार्थ को भरें।

कृषक फल तथा सब्जियों के प्रसंस्करण की तकनीक को अपनाकर न केवल इनके स्वाद व गुणवत्ता को बढ़ा सकते हैं बल्कि इनके उत्पादों के विपणन से अपनी आजीविका को भी बढ़ा सकते है। पर्वतीय क्षेत्रों में ज्यादातर फल तथा सब्जियां जैविक तरीके से उगाई जाती हैं जिनसे तैयार उत्पाद स्वास्थ्य एवं पोषण से भरपूर होते हैं साथ ही प्रसंस्करण के उपरान्त देर तक संरक्षित किये जा सकते है।

नैनोटेक्नोलॉजी : स्मार्ट कृषि की ओर

प्रियंका खाती, पंकज कुमार मिश्रा, कुशाग्रा जोशी एवं रेनू सनवाल
भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

आज के तेजी से बदलते दौर में, तकनीकी उन्नति कृषि क्षेत्र में भी अपना विस्तार कर रही है, और इसमें नैनोटेक्नोलॉजी का योगदान अद्वितीय है। नैनोटेक्नोलॉजी, जिसे हम सामान्यत: नैनों के विज्ञानं के रूप में समझते है, वह छोटे आकार के अणुओं और रसायनों के स्तर पर काम करने वाला एक विज्ञान है। इसे 'स्मार्ट कृषि' में लागू करके हम अपनी कृषि प्रणाली में सुधार कर सकते हैं।

नैनोटेक्नोलॉजी और कृषि

नैनोटेक्नोलॉजी से कृषि क्षेत्र में कई समस्याओं का समाधान संभव हो रहा है। नैनोमटीरियल्स, जो नैनोटेक्नोलॉजी का हिस्सा हैं, पौधों के अच्छे विकास के लिए महत्वपूर्ण तत्वों को पहुंचाने में मदद कर सकते हैं। इसके अलावा, नैनोसेंसर्स और नैनोरोबॉट्स कृषि क्षेत्र में ऊर्जा की बचत कर सकते हैं।

किसानों को लाभ

स्मार्ट कृषि के माध्यम से किसानों को अपनी फसलों की स्थिति का त्वरित और सटीक अनुमान होता है, जिससे उन्हें अनुकूल निर्णय लेने में मदद मिलती है। नैनोटेक्नोलॉजी के उपयोग से सुरक्षित कीट नाशको और उर्वरकों का उपयोग करने से फसलों पर कीटाणु और बीमारियों का प्रबंधन भी संभव है। कृषि में नैनो टेक्नोलॉजी के ढेर सारे फायदे हैं जिन में नैनो–फॉर्मूलेशन या नैनो–फर्टिलाइजर्स मुख्य हैं।

नैनोमटेरियल के प्रकार

नैनो–फॉर्मूलेशन को नैनो–पेस्टिसाइड्स और नैनो–हर्बिसाइड्स जैसे विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है जो उनके द्वारा वितरित सामग्री पर आधारित होते हैं। नैनो–कीटनाशक वे उत्पाद हैं जिनमें नैनो आकार में कीटनाशक होते हैं और इसलिए इनका उपयोग बहुत कम मात्रा में किया जाता है। इसी प्रकार नैनो–हर्बिसाइड्स बहुत छोटे आकार में हर्बिसाइड्स वितरित करते हैं जिससे उनकी दक्षता बढ़ जाती है। नैनो–उर्वरक का एक अच्छा उदाहरण नैनोयूरिया है जो आजकल बहुत प्रसिद्ध है। इसलिए हम कह सकते हैं कि नैनोफॉर्मूलेशन वे फॉर्मूलेशन हैं जो पौधों के विकास और रखरखाव के लिए आवश्यक सूक्ष्म या मैक्रोन्यूट्रिएंट को वितरित करते हैं।

नैनोमटेरियल और उनके तंत्र को विकसित करने के तरीके

नैनो–फॉर्मूलेशन को बनाने की कई सारी विधि हैं जैसे भौतिक, रासायनिक और जैविक। विनिर्माण के लिए किस तकनीक का उपयोग किया जाता है इसके आधार पर उत्पाद की प्रकृति भी भिन्न होती है। बहुत छोटे आकार के कारण उनका आयतन और आकार का अनुपात बड़ा होता है, या हम कह सकते हैं कि सतह का क्षेत्रफल बहुत बड़ा होता है। क्षेत्रफल किसी भी पदार्थ की सतह पर किसी भी वातावरण के साथ प्रतिक्रिया के लिए जिम्मेदार होता है। बड़े सतह क्षेत्र का अर्थ है अधिक प्रतिक्रियाशीलता और अधिक प्रभावशीलता।

नैनो–फॉर्मूलेशन और स्मार्ट कृषि

अब तक कृषि में भारी मात्रा में उर्वरकों, कीटनाशकों और अन्य रसायनों का उपयोग प्रचलित था। लेकिन दूसरी ओर उपयोग किए गए रसायनों की एक बड़ी मात्रा निक्षालन और अपवाह के कारण नष्ट हो जाती है। पौधों को इन रसायनों की बहुत ही कम मात्रा में आवश्यकता होती है और इस प्रकार इतनी बड़ी मात्रा में उपयोग करना कृषि का ये एक स्मार्ट तरीका नहीं है। लक्षित कार्रवाई के कारण नैनो–फॉर्मूलेशन की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होगी जो न केवल बर्बादी को कम

करेगा बल्कि अत्यधिक रसायनों के हानिकारक प्रभावों को भी रोकेगा। इस कारण से कृषि में नैनो–फॉर्मूलेशन का अनुप्रयोग कृषि करने का स्मार्ट तरीका होगा।

नियंत्रित रिलीज़ उर्वरक

ये एक प्रकार के नैनो–उर्वरक हैं जो एक कैप्सूल जैसी संरचना में समाहित होते हैं। नियंत्रित रिलीज़ उर्वरकों के पीछे का विचार मिट्टी में उर्वरक के निर्गमन को नियंत्रित करना है जिससे मिट्टी को पोषक तत्व लंबे समय तक उपलब्ध रहते हैं। इसके अलावा, नियंत्रित–रिलीज उर्वरक पर्यावरण में पोषक तत्वों के निर्गमन को कम करके कृषि की पर्यावरणीय स्थिरता में सुधार कर सकते हैं। कार्बन नैनोट्यूब, ग्राफीन और क्वांटम डॉट्स जैसे नैनोमटेरियल्स में अद्वितीय गुण होते हैं जो उन्हें नियंत्रित–रिलीज अनुप्रयोगों के लिए आदर्श बनाते हैं। उनका छोटा आकार, बड़ा सतह क्षेत्र–से–आयतन अनुपात, और रिलीज दर को नियंत्रित करने के लिए विभिन्न सामग्रियों के साथ लेपित होने की क्षमता पोषक तत्व वितरण की दक्षता को बढ़ाती है। अध्ययनों से ज्ञात होता है कि इनके उपयोग से फसल की उपज, पोषक तत्व उपयोग दक्षता और समग्र पौधों के स्वास्थ्य में सुधार हो सकता है। इन उर्वरकों का संभावित अनुप्रयोग चावल, गेहूं, मक्का और सोयाबीन सहित विभिन्न फसलों तक फैला हुआ है, जिससे फसल की उपज और पोषक तत्व उपयोग दक्षता में आशाजनक परिणाम मिले हैं।

पोषक तत्वों की लीचिंग को कम करके, नियंत्रित–रिलीज़ नैनो–उर्वरक जल निकायों के प्रदूषण को कम करते हैं और यूट्रोफिकेशन को भी कम करते हैं, अंततः जलीय पारिस्थितिक तंत्र की रक्षा करते हैं।

नैनो-फॉर्मूलेशन या नैनो-उर्वरकों को खेतों में लागू करने की विधि

नैनो–उर्वरकों को सीधे छिड़काव और कोटिंग के माध्यम से, या अप्रत्यक्ष रूप से मिट्टी में अनुप्रयोग से पौधों पर डाला जाता है। कृषि में छिड़काव सबसे आम प्रयोग विधि है, क्योंकि यह अपेक्षाकृत आसान है और इसे जल्दी किया जा सकता है। फिर भी, यह स्वीकार करना महत्वपूर्ण है कि नैनो–उर्वरकों को उनके छोटे आकार के कारण वर्षा या सिंचाई द्वारा आसानी से बहाया जा सकता है। इसलिए, उन्हें ऐसे तरीके से लागू करना जरूरी है जो मिट्टी के भीतर कणों के प्रतिधारण की गारंटी दें। ड्रेंचिंग और कोटिंग वितरण के अन्य मानक तरीके हैं। ये समय के साथ पोषक तत्वों की रिहाई को नियंत्रित कर सकते हैं और यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि उर्वरक पूरी मिट्टी में समान रूप से वितरित हो।

जब नैनोकणों को पत्तियों पर लगाया जाता है, तो उन्हें मोमी छल्ली से गुजरना होता है। मोमी छल्ली एक प्राकृतिक बाधा है जो पानी के नुकसान को रोकती है और पत्ती की रक्षा करती है। उच्च पौधों की जड़ प्रणाली भी छिद्रों के माध्यम से नैनो–मटेरियल को अवशोषित कर सकती है। ये जड़ के अंदर, कोशिका के माध्यम से, अंतरकोशिकीय स्थान में प्रवेश करते हैं। वैकल्पिक रूप से, नैनो–मटेरियल को सैल–टू–सैल ट्रांसफर चैनल द्वारा अवशोषित किया जा सकता है, जहां वे सैल साइटोप्लाज्म में प्रवेश करते हैं।

मिट्टी और मिट्टी के सूक्ष्म जीवों पर नैनो-मटेरियल का प्रभाव

नैनो–बायोउर्टिलाइजर नैनो–मटेरियल और जीवित सूक्ष्मजीवों को जोड़ते हैं जो मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाकर पौधों की वृद्धि और उपज में सुधार करने के लिए बनाए गए हैं। यह मिट्टी की संरचना और पौधों की रूपात्मक, शारीरिक, जैव रासायनिक और उपज विशेषताओं में सुधार करता है। नैनो–उर्वरक का निर्माण और अनुप्रयोग स्मार्ट उर्वरक की दिशा में एक व्यावहारिक कदम है जो विकास और फसलों की उपज को बढ़ाता है।

नैनो–उर्वरक जड़ तक पोषक तत्वों का कुशल वितरण करके मिट्टी में सूक्ष्म जीवो की गतिविधि को बढ़ाते हैं। नैनो–उर्वरक मिट्टी के सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बड़ा कर कार्बनिक पदार्थों के अपघटन में सुधार और पोषक चक्र में वृद्धि करते हैं। नैनो–उर्वरक मिट्टी में नत्रजन

खनिजकरण दर को बढ़ाते हैं, जो मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, मिट्टी के पारिस्थितिक तंत्र को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। नैनो–उर्वरक मिट्टी की संरचना और जल–धारण क्षमता में सुधार करते हैं, कार्बनिक पदार्थ बढ़ाते हैं और लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बनाते हैं। इसके अलावा, कुछ नैनो–उर्वरक, मिट्टी के कणों को एक साथ बांधने के लिए जिम्मेदार होते हैं, जिससे बड़े समुच्चय बन सकते हैं। बेहतर मृदा एकत्रीकरण से मिट्टी की संरचना बेहतर होती है, जल–धारण क्षमता बढ़ती है और मिट्टी का कटाव भी कम होता है।

नैनो-फॉर्मूलेशन का पर्यावरण पर प्रभाव

अधिक कुशल होने के अलावा, नैनो–उर्वरक पर्यावरण के लिए काफी हद तक सुरक्षित हैं। पारंपरिक उर्वरक मिट्टी में बड़ी मात्रा में नत्रजन और फास्फोरस रिहा करते हैं। दूसरी ओर, नैनो–उर्वरकों को समय के साथ अपने पोषक तत्वों को धीरे–धीरे जारी करने के लिए बनाया गया है, जिससे मिट्टी में पोषक तत्वों का संतुलन बना रहेगा और पोषक तत्वों के अपवाह से पर्यावरणीय क्षति का खतरा कम होगा। चूंकि वे पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में अधिक कुशल हैं, इसलिए इनमें कम इनपुट की आवश्यकता होती है, जिसका अर्थ है कि किसान उर्वरक लागत पर पैसा बचा सकते हैं। इसके अलावा, नैनो–उर्वरकों के प्रयोग में श्रम लागत की आवश्यकता भी कम हो जाती है। जैसे–जैसे नैनोटेक्नोलॉजी में सुधार जारी रहेगा, ये उर्वरक और भी अधिक कुशल और लागत प्रभावी हो जाएंगे, जिससे किसान कम लागत में अधिक उत्पादन कर पाएंगे।

नैनो-फॉर्मूलेशन के उत्पादन की लागत

पोषक तत्वों की बढ़ी हुई उपयोग दक्षता, नियंत्रित निर्गमन और लक्षित वितरण के कारण नैनो–उर्वरक कम उत्पादन लागत प्राप्त कर सकते हैं, जिससे क्षेत्र में उर्वरकों की बर्बादी कम हो सकती है। नैनो–उर्वरक आमतौर पर पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में बहुत सस्ते होते हैं क्योंकि उनमें कम श्रम लगता है, प्रति अनुप्रयोग कम उर्वरक की आवश्यकता होती है, और पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में अवशोषण दर अधिक होती है। इसके अलावा, नैनो–उर्वरक लंबे समय तक मिट्टी में रह सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप भी कम उपयोग और कम लागत होती है।

नैनो आधारित उत्पादों से जुड़ी सीमाएँ और संभावित जोखिम

नैनोटेक्नोलॉजी एक तेजी से बढ़ता हुआ क्षेत्र है जिसमें नैनो–उर्वरकों के विकास सहित कृषि में कई अनुप्रयोग हैं। ये नैनो–उर्वरक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ा सकते हैं, पोषक तत्वों की हानि को कम कर सकते हैं और पौधों के विकास को बढ़ावा दे सकते हैं। हालाँकि, नैनो–उर्वरकों के प्रयोग के संभावित खतरों का पूरी तरह से पता नहीं लगाया गया है। उचित कदमों और सावधानियों के बिना नैनो आधारित उत्पादों के उपयोग से जुड़े कई जोखिम हैं। जोखिमों में मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण शामिल है इसलिए उचित निवारक उपायों और निर्देशों का ध्यान रखा जाना बहुत आवश्यक है। उचित उपायों के साथ लागू होने पर कृषि में नैनोटेक्नोलॉजी एक वरदान है।

कृषि रसायन का महत्व और उनका सुरक्षित उपयोग

तिलक मंडल, अमित कुमार एवं विजय सिंह मीणा
भाकृअनुप-विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधाान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

कृषि रसायन खरपतवार, कीट और बीमारियों को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जो फसलों को नुकसान पहुँचाते हैं और इस प्रकार उत्पादित भोजन की मात्रा और गुणवत्ता को कम करते हैं। वैश्विक फसल उत्पादन का पच्चीस प्रतिशत कीटों के हमलों के कारण नष्ट हो जाता है। भारत में हर वर्ष, कीट और रोग से 45000 करोड़ रूपये के लगभग या बीस से तीस प्रतिशत फसल उत्पादन को नष्ट कर देते हैं। दस प्रकार कीटों और बीमारियों को नियंत्रित करना, फसल के नुकसान को रोकना और राष्ट्र की खाद्य सुरक्षा को बनाए रखना आवश्यक हो जाता है। कीटों और बीमारियों के प्रभाव से फसलों के नुकसान को कम करने के लिए भारत में हर वर्ष अनुमानित (45%) पैंतालिस प्रतिशत कीट नाशकों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। टिकाऊपन सुनिश्चित करने के लिए हमें बढ़ती आबादी और पर्यावरण में बढ़ते प्रदूषण से निपटना होगा, इस प्रकार कृषि रसायनों का विवेकपूर्ण उपयोग समय की आवश्यकता बन जाता है, कीटनाशकों का प्रभुत्व भारतीय फसल सुरक्षा बाजार पर लगभग पचपन प्रतिशत बाजार पर कब्जा है, इसके बाद वनस्पतियाँ 24 प्रतिशत, कवकनाशी 19 प्रतिशत और अन्य 4 प्रतिशत का स्थान आता है।

कृषि रसायन क्या हैं?

कृषि रसायन एक ऐसा रासायनिक एजेंट हैं जिनका उपयोग कृषि भूमि पर फसलों में पोषक तत्वों को बेहतर बनाने के लिए किया जाता है। वे हानिकारक कीटों को मारकर फसल की उत्पादन में वृद्धि करते हैं। इन्हें बागवानी, डेयरी फार्मिंग, मुर्गी पालन, फसल स्थानान्तरण, सहरोपण आदि जैसे कृषि क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है। कृषि में उपयोग किए जाने वाले विभिन्न रासायनिक उत्पादों को कृषि रसायन कहा जाता है। कीटनाशक जैसे कीटनाशी, खरपतवारनाशी, कवकनाशी तथा रोगनाशी और सूत्रकृमिनाशी जैसे रसायन कृषि रसायन की श्रेणी में आते हैं।

कृषि रसायनों के लाभ

उपरोक्त सभी प्रभावों के बावजूद, अगर कृषि रसायनों को सावधानी से उपयोग किया जाये तो फलदायी परिणाम मिल सकते हैं। कृषि रसायन के लाभ फसल की पैदावार बढ़ाने तक ही सीमित नहीं हैं। फसल सुरक्षा, किसानों को खाद्य उत्पादन कियाओं में फसलों की उपज को बढ़ाने में सक्षम बनाता है।

फसल सुरक्षा रसायनों के बिना खाद्य उत्पादन का संतुलन बिगड़ जायेगा, कई फल और सब्जियाँ विलुप्त हो जाऐंगी, और कीमतें बढ़ जाऐंगी। एक अन्य महत्वपूर्ण लाभ कीटनाशक, उपभोक्ताओं के लिए खाद्य कीमतों को नियंत्रिण करने में मदद करता है। फसल सुरक्षा के लिए रसायनों का कम से कम उपयोग करने का प्रयास करना चाहिए।

कृषि रसायन प्रदूषण

कृषि प्रदूषण कृषि के जैविक और अजैविक अपशिष्ट उत्पाद हैं जो पर्यावरण और आस–पास के पारिस्थिक तंत्र में प्रदूषण, या मनुष्यों और उनके आर्थिक हितों को नुकसान पहुँचाते हैं। कृषि रसायन से खाद्य और पीने का पानी प्रदूषित हो सकता है, और मानव स्वास्थ्य को खतरा हो सकता है। इससे भौतिक और रासायनिक दोनों प्रकार के क्षरण हो सकते है और फसल की उपज में उल्लेखनीय कमी के साथ मिट्टी में माइक्रोफ्लोरा और जीवों की हानि हो सकती है। हमारी कृषि प्रणालियों पर कृषि रसायन उत्सर्जन का प्रभाव असंख्य हैं।

हालांकि प्राकृतिक और सिंथेटिक दोनों तरह के उर्वरकों के उपयोग से अतिरिक्त पोषक तत्व हो सकते हैं जो स्वास्थ्य और पानी की समस्याओं का कारण बनते हैं। विभिन्न उर्वरकों के उत्यधिक उपयोग को व्यापक रूप से कृषि रासायनिक कचरे के रूप में संदर्भित किया जाता है और यह भोजन और भूजल फसलों को प्रदूषित कर सकता है नाइट्रेट जल निकायों में जल्दी से प्रवेश कर सकते हैं और अत्यधिक घुलनशील होते हैं कई देशों द्वारा भूजल के लिए फॉस्फेट युक्त मिट्टी और उच्च स्तर के फॉस्फेट का पता लगाया जाता है।

अनुकूल और प्रतिकूल प्रभाव

कृषि रसायन आमतौर पर जहरीले होते हैं और थोक भंडारण करने पर महत्वपूर्ण पर्यावरणीय जोखिम पैदा कर सकते हैं, मुख्य रूप से तब जब ये अचानक फैल जायें। कई देशों में एग्रोकेमिकल्स का उपयोग अत्यधिक विनियमित हो गया है, और अनुमोदित कृषि उत्पादों को खरीदने और बेचने के लिए सरकार द्वारा प्रदान किया गया परमिट आवश्यक होना चाहिए।

कृषि रसायन के साथ–साथ रासायनिक उरर्वक से पर्यावरण को नुकसान होता हैं। उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग ने नाइट्रेट प्रदूषण में इढ़ावा मिलता है, इसके अलावा, उर्वरकों से नदियाँ में भी प्रदूषण फैलता है जिससे शैवाल उत्पादन बढ़ जाता हैं, जो कि मछलियों और अन्य जलीय जानवरों के जीवन चक्र पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

कीटनाशकों के सुरक्षित उपयोग के लिए निर्देश

खरीदारी करते समय

- कीटनाशक, जैव कीटनाशक केवल पंजीकृत कीटनाशक डीलर से ही खरीदें। जिनके पास वैध लाइसेंस हो, बिना लाइसेंस वाले व्यक्ति से फुट पाथ डीलर से कीटनाशक न खरीदें।
- एक निर्दिष्ट क्षेत्र में एकल संचालन के लिए केवल आवश्यक मात्रा में कीटनाशकों की खरीद करें। पूरे सीजन के लिए थोक में कीटनाशक न खरीदें।
- कंटेनरों, पैकेटों पर अनुमोदित लेबल देखें, बैच संख्या, पंजीकरण संख्या, निर्माण की तारीख, समाप्ति की तारीख, कंटेनरों में अच्छी तरह से पैक किए गये कीटनाशकों को खरीदें। केटेनरों पर अनुमोदित लेबल के बिना कीटनाशक न खरीदें।
- कभी भी एक्सपायर्ड कीटनाशक नहीं खरीदें। ऐसे कीटनाशक न खरीदें जिनके कंटेनर लीक, ढीले और बिना सील किये हुए हों।

भंडारण के दौरान

- कीटनाशकों को घर के परिसर में कभी भी भंडारण न करें, घर के परिसर से दूर रखें।
- कीटनाशकों को मूल कंटेनरों से दूसरे कंटेनर में कभी भी स्थानान्तरित न करें।
- कीटनाशकों और खरपतवारनाशी को अलग से संग्रहित किया जाना चाहिए।
- जहाँ कीटनाशकों का भंडारण किया गया है वहाँ चेतावनी के संकेतों के साथ क्षेत्र को चिन्हित किया जाना चाहिए, कीटनाशकों को बच्चों की पहुँच और पशुओं से दूर रखा जाना चाहिए।
- भंडारण स्थान को सीधे धूप और बारिश से अच्छी तरह से संरक्षित किया जाना चाहिए।

कीटनाशक संभालते समय

- परिवहन के दौरान कीटनाशकों को अलग रखें। भोजन, चारा या अन्य खाने योग्य वस्तुओं के साथ कीटनाशकों का कभी भी परिवहन न करें।
- कभी भी भारी मात्रा में कीटनाशक सिर, कंधे या पीठ पर न रखें।

छिड़काव घोल तैयार करते समय

- हमेशा साफ पानी का इस्तेमाल करें। गन्दे या रूके हुए पानी का प्रयोग न करें।
- सुरक्षात्मक कपड़ों जैसे हाथ के दस्ताने, चेहरे पर मास्क, टोपी, एप्रन और पूर्ण पतलून का प्रयोग करें। कभी भी सुरक्षात्मक कपड़े पहने बिना छिड़काव न करें। कीटनाशक के घोल को शरीर के किसी अंग पर न गिरने दें। हमेशा अपनी नाक, आँख, कान, हाथ आदि को स्प्रे के घोल के छलकने से बचाऐं।
- उपयोग करते से पहले कीटनाशक कंटेनर लेबल पर दिए गये निर्देशों को ध्यान से पढ़ें। आवश्यकता अनुसार घोल तैयार करें।
- हमेशा कीटनाशक की अनुशंसित खुराक का प्रयोग करें। अधिक मात्रा में उपयोग न करें जो पौधे के स्वास्थ्य और पर्यावरण को प्रभावित कर सकता है।
- ऐसी कोई भी गतिविधि नहीं करनी चाहिए जो आपके स्वास्थ्य को प्रभावित कर सके। कीटनाशकों के छिड़काव के दौरान खाना, पीना, धूम्रपान नहीं करना चाहिए।

कीटनाशकों के छिड़काव हेतु उपकरणों का चयन

- सही प्रकार के उपकरणों का चयन करें, खराब उपकरणों का प्रयोग न करें, सही आकार के नोजल का चयन करे, दोषपूर्ण नोजल का प्रयोग न करें।
- बन्द नोजल को मुँह से न फूकें।
- खरपतवारनाशी और कीटनाशी दोनों के लिए कभी भी एक ही स्प्रेयर का प्रयोग न करें, अलग–अलग स्प्रेयर का प्रयोग करना चाहिए।

कीटनाशकों का छिड़काव करते समय सावधानियाँ

- अनुशंसित से अधिक मात्रा और अनुमोदित सांद्रता में ही कीटनाशकों का प्रयोग करें।
- छिड़काव ठंडे और शान्त मौसम में किया जाना चाहिए। तेज धूप या तेज हवा में छिड़काव न करें।
- छिड़काव धूप वाले दिन किया जाना चाहिए। प्रत्येक छिड़काव के लिए अनुशंसित स्प्रेयर का प्रयोग करें।
- छिड़काव हवा की दिशा में किया जाना चाहिए। बारिश से ठीक पहले और बारिश के तुरन्त बाद छिड़काव न करें।
- छिड़काव के बाद स्प्रेयर और बाल्टी को डिटर्जेन्ट साबुन का उपयोग करके साफ पानी से धोना चाहिए।
- छिड़काव के बाद खेत में जानवरों, श्रमिकों को प्रवेश न करने दें।

छिड़काव के बाद सावधानियाँ

- बचे हुए घोल का निपटान सुरक्षित स्थान पर करना चाहिए। तालाबों या पानी की लाईन में या उसके आस–पास नहीं बहाना चाहिए।
- उपयोग किए गये खाली कंटेनरों को पत्थर या हथौड़े से तोड़ देना चाहिए और पानी के स्रोतों से दूर गहरी मिट्टी में गाड़ देना चाहिए। कीटनाशकों के खाली कंटेनरों को अन्य वस्तुओं के भण्डारण के लिए पुनः उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।
- खाना खाने या धूम्रपान करने से पहले हाथ और चेहरा साफ पानी और साबुन से धोऐं।
- विषाक्त के लक्षण दिखने पर प्राथमिक उपचार दें और रोगी को डॉक्टर को दिखाऐं, डॉक्टर को खाली कंटेनर भी दिखाऐं।

कीटनाशकों ने उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार और किसानों को उच्च लाभ सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भोजन और पीने के पानी में कीटनाशक अवशेष को कम करने तथा मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर कीटनाशक की प्रतिकूल प्रभाव को ध्यान में रखते हुए कीटनाशकों का उपयोग उपयुक्त और सुव्यवस्थित छिड़काव उपकरण के साथ–साथ आवश्यक सभी सावधानियाँ बरतनी चाहिए, कीटनाशक प्रबन्धन के सभी चरणों को अपना करके कीटनाशकों के जोखिम को कम किया जा सकता है।

ICAR-VIVEKANANDA INSTITUTE
OF HILL AGRICULTURE
HAWALBAGH, ALMORA, UTTARAKHAND

राजभाषा संबंधी गतिविधियां

संस्थान में राजभाषा सम्बन्धी गतिविधियां

वर्ष 2022-2023

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की त्रैमासिक बैठक

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की चार बैठकें जून 27, 2022 सितम्बर 26, 2022 दिसम्बर 28, 2022 एवं मार्च 24, 2023 को आयोजित की गयी। ये बैठकें डा. लक्ष्मी कान्त निदेशक, भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड, की अध्यक्षता में आयोजित की गयीं। बैठक के दौरान संस्थान में हुई तिमाही प्रगति की समीक्षा की गयी तथा संस्थान में हो रही हिन्दी की प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया गया तथा भविष्य में हिन्दी को उत्तरोत्तर प्रगति हेतु विचार–विमर्श किया गया। राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम की विभिन्न मदों में 'क' एवं 'ख' क्षेत्र के साथ हिन्दी पत्राचार के लिए 100 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है तथा 'ग' क्षेत्र के साथ 65 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है। संस्थान द्वारा 'क' क्षेत्र के साथ लगभग 80–82 प्रतिशत 'ख' क्षेत्र साथ 70–72 प्रतिशत तथा 'ग' क्षेत्र के साथ 65–70 प्रतिशत पत्र व्यवहार किया जा रहा है। राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन सुनिश्चित किया जा रहा है। वार्षिक कार्यक्रम में नोटिंग के लिए 75 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है, जबकि संस्थान द्वारा 95 प्रतिशत से अधिक नोटिंग का कार्य हिन्दी में किया जा रहा है। संस्थान द्वारा संचालित सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में व्याख्यान हिन्दी में तैयार किए जाते हैं तथा सभी प्रशिक्षण कार्यक्रम हिन्दी में ही सम्पन्न होते है।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), अल्मोड़ा की छमाही बैठक

भारत सरकार, राजभाषा विभाग द्वारा संस्थान को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की अध्यक्षता का

दायित्व दिया गया है। संस्थान द्वारा नराकास के छमाही बैठकें निर्धारित समय पर आयोजित की जाती है। वर्ष 2022 के दौरान ये बैठकें जुलाई 27 एवं दिसम्बर 21 को आयोजित की गयी। वर्तमान में समिति के सदस्य कार्यालयों की संख्या 32 है जिसमें केन्द्रीय सरकार के शोध संस्थान, विभाग, राष्ट्रीयकृत बैंक, उपक्रम, सशस्त्र बल आदि सम्मिलित है। संस्थान द्वारा राजभाषा विभाग द्वारा मांगी गयी सूचनाएं निर्धारित समय पर भेजी जाती है तथा राजभाषा सूचना प्रबन्धन प्रणाली के अन्तर्गत सभी सूचनाएं आन लाइन प्रेषित की जाती है। संस्थान नराकास के सभी सदस्य कार्यालयों के बीच हिन्दी को आगे बढ़ाने के लिए सामन्जस्य स्थापित करने का निरन्तर प्रयास कर रहा है। डॉ. जे.के. बिष्ट, विभागाध्यक्ष, फसल उत्पादन ने सभी प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए उन्हें संस्थान की उपलब्धियों से अवगत कराया तथा कार्यक्रम की प्रस्तावना प्रस्तुत की। तत्पश्चात सभी सदस्य कार्यालयों के प्रतिनिधियों द्वारा अपना परिचय दिया गया। इसके उपरान्त डॉ. प्रियंका खाती, वैज्ञानिक द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पिछली बैठक के बिन्दुओं पर की गई कार्यवाही प्रस्तुत की गयी। श्रीमती रेनू सनवाल, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी द्वारा राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम 2022–23, राजभाषा अधिनियम 1963 की 3(3) व राजभाषा नियम 11 की जानकारी दी गयी। नराकास के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. लक्ष्मीकान्त ने सभी नराकास के सदस्यों का स्वागत एवं आभार व्यक्त करते हुए कहा कि हम सब का कर्त्तव्य हैं कि राजभाषा हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग किया जाय। उन्होंने नराकास के उदेश्य प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं सदभावना पर बल देते हुए कहा कि हमें सभी को हिन्दी में कार्य करने हेतु प्रेरित करना चाहिए तथा हिन्दी में अच्छा कार्य करने हेतु प्रोत्साहन देना चाहिए तथा हिन्दी का विकास सदभावना के उदेश्य से करना चाहिए। उन्होंने पिछली बैठक की समीक्षा करते हुए सभी सदस्य कार्यालयों से अनुरोध किया कि वे राजभाषा की वेबसाइट पर जल्दी से जल्दी पंजीकरण करवायें तथा राजभाषा विभाग को भेजी जाने वाली रिपोर्ट को भी समय पर प्रेषित करें। उन्होंने राजभाषा की वेबसाइट पर पंजीकरण करने एवं तिमाही व छमाही रिपोर्ट प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी दी। उन्होंने कहा कि हम भारत सरकार में सेवारत है अतः हमें राजभाषा अधिनियम के अन्तर्गत आने वाली सभी नियमों को अनुपालन करना चाहिए ताकि संसदीय समिति के निरीक्षण के दौरान उन्हें किसी प्रकार कठिनाई ना हो। उन्होंने सभी सदस्य कार्यालयों से आग्रह किया कि वे अगली बैठक में अपने–अपने संस्थान में हो रही हिन्दी की प्रगति पर पांच मिनट का एक प्रस्तुतीकरण दें जिससे अन्य सदस्य कार्यालय भी लाभान्वित हो सकें। डॉ. कान्त ने सभी आगन्तुकों को कम्प्यूटर की उन विधाओं से भी अवगत कराया जिसके द्वारा वे आसानी से हिन्दी टंकण व अनुवाद का कार्य कर सकते है।

हिन्दी पखवाड़ा (14 सितम्बर से 30 सितम्बर 2022)

भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा में सितम्बर 14 से 30, 2022 तक 'हिन्दी पखवाड़ा' का आयोजन किया गया। 'हिन्दी पखवाड़ा' के अवसर पर सर्वप्रथम संस्थान के निदेशक की ओर से हिन्दी में अधिक से अधिक कार्य करने की अपील तथा माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार एवं माननीय महानिदेशक भाकृअनुप महोदयों द्वारा प्रेषित शुभकामना सन्देशों को समस्त कार्मिकों के मध्य परिचालित किया गया तथा शुभकामना सन्देश के पोस्टरों को विभिन्न अनुभागों एवं कक्षों में लगाया गया। 'हिन्दी पखवाड़ा' के दौरान विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए जिनमें प) हिन्दी टिप्पण एवं प्रारूप लेखन पप) कम्प्यूटर में हिन्दी टंकण प्रतियोगिता प्रमुख थी। हिन्दी टिप्पण एवं प्रारूप लेखन प्रतियोगिता एवं हिन्दी टंकण प्रतियोगिता प्रशासनिक वर्ग के कर्मचारियों के लिए आयोजित की गयी। हिन्दी पखवाड़ा के दौरान दिनांक सितम्बर 30, 2022 को राजभाषा संगोष्ठी एवं कार्यशाला का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं के लिए तीन वर्ग बनाए गए वर्ग– 1 में 'क' क्षेत्र के वैज्ञानिक एवं समस्त अधिकारी, वर्ग –2 में 'ख' एवं 'ग' क्षेत्र में समस्त वैज्ञानिक एवं अधिकारी, तथा वर्ग– 3 में सहायक वर्ग एवं टी– 4 तक के कार्मिक रखे गए। इन वर्गों को बनाने का उददेश्य था कि संस्थान में कार्यरत सबसे नीचे स्तर के कार्मिक

से वैज्ञानिक तक सभी इन कार्यक्रमों में प्रतिभागिता कर सकें। फलस्वरूप प्रत्येक वर्ग के हिन्दी व अहिन्दी भाषी क्षेत्रों कार्मिकों ने इन प्रतियोगिताओं में उत्साह के साथ सहभागिता की। 'हिन्दी पखवाड़ा' के दौरान दिनांक 30.09.2022 को भी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में संस्थान के वैज्ञानिकों, प्रशासनिक अधिकारी, वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी ने अपने– अपने विचार व्यक्त किए। वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी ने कार्यालय में राजभाषा की स्थिति एवं दैनिक सरकारी काम काज में राजभाषा के प्रयोग के महत्व पर प्रकाश डाला। इसके उपरान्त पुरस्कार वितरण कार्यक्रम के अन्तर्गत संस्थान के निदेशक एवं अध्यक्ष संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान वाले कार्मिकों को प्रमाण पत्र एवं पुरस्कार प्रदान किए।

अपने सम्बोधन में संस्थान के निदेशक डॉ. लक्ष्मी कान्त ने कहा कि हम सब का कर्तव्य हैं कि राजभाषा हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग किया जाए। हमें सभी को हिन्दी में कार्य करने के लिये प्रेरित करना चाहिए तथा हिन्दी में अच्छा कार्य करने हेतु प्रोत्साहन देना चाहिए। उन्होंने कहा कि हिन्दी पखवाड़ा के दौरान आयोजित कार्यक्रमों में अधिक से अधिक कार्मिकों को सहभागिता करनी तथा 'हिन्दी पखवाड़ा' के दौरान किए जाने वाले कार्यक्रमों को अधिक रोचक बनाया जाना चाहिए।

वर्ष 2023–2024

संसदीय राजभाषा निरीक्षण

संस्थान में हो रही राजभाषा प्रगति का निरीक्षण दूसरी उपसमिति, संसदीय राजभाषा समिति की दिनांक मई 25, 2023 को आयोजित बैठक के दौरान श्रीमती रीता बहुगुणा जोशी, माननीय संयोजक की अध्यक्षता में किया गया। निरीक्षण के दौरान संस्थान में राजभाषा की प्रगति संतोषजनक पायी गयी।

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की त्रैमासिक बैठक

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की चार बैठकें जून 26, 2023; सितम्बर 20, 2023; दिसम्बर 05, 2023 एवं मार्च 27, 2024 को आयोजित की गयी। ये बैठकें डा. लक्ष्मी कान्त निदेशक, भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखण्ड, की अध्यक्षता में आयोजित की गयी। बैठक के दौरान संस्थान में हुई तिमाही प्रगति की समीक्षा की गयी तथा संस्थान में हो रही हिन्दी की प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया गया तथा भविष्य में हिन्दी को उत्तरोत्तर प्रगति हेतु विचार–विमर्श किया गया। राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम की विभिन्न मदों में 'क' एवं 'ख' क्षेत्र के साथ हिन्दी पत्राचार के लिए 100 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है तथा 'ग' क्षेत्र के साथ 65 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है। संस्थान द्वारा 'क' क्षेत्र के साथ 100 प्रतिशत 'ख' क्षेत्र साथ 100 प्रतिशत तथा 'ग' क्षेत्र के साथ 85 प्रतिशत पत्र व्यवहार किया जा रहा है। राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन सुनिश्चित किया जा रहा है। वार्षिक कार्यक्रम में नोटिंग के लिए 75 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है, जबकि संस्थान द्वारा 100 प्रतिशत नोटिंग का कार्य हिन्दी में किया जा रहा है। संस्थान द्वारा संचालित सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में व्याख्यान हिन्दी में तैयार किए जाते हैं तथा सभी प्रशिक्षण कार्यक्रम हिन्दी में ही सम्पन्न होते है।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), अल्मोड़ा की 20वीं छमाही बैठक

भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा में जुलाई 26, 2023 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), अल्मोड़ा की 20वीं बैठक का आयोजन संस्थान के निदेशक तथा नराकास के अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मी कान्त की अध्यक्षता में किया गया। इस बैठक में अल्मोड़ा नगर के केन्द्रीय सरकार के विभागों, कार्यालयों, उपक्रमों, सशस्त्र बलों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों के अधिकारियों एवं प्रतिनिधियों ने सहभागिता की। डॉ. जे. के. बिष्ट, विभागाध्यक्ष, प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, पीएमई ने सभी प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए उन्हें संस्थान की उपलब्धियों से अवगत कराया तथा कार्यक्रम की प्रस्तावना प्रस्तुत की। तत्पश्चात सभी सदस्य कार्यालयों के प्रतिनिधियों द्वारा अपना परिचय दिया गया। इसके

उपरान्त श्रीमती रेनू सनवाल, मुख्य तकनीकी अधिकारी द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पिछली बैठक के बिन्दुओं पर की गई कार्यवाही प्रस्तुत की गयी तथा राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम 2023–24 के बारे में अवगत कराया गया। नराकास के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. लक्ष्मी कान्त ने सभी नराकास के सदस्यों का स्वागत एवं आभार व्यक्त करते हुए कहा कि हम सब का कर्त्तव्य हैं कि राजभाषा हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग किया जाय। उन्होंने कहा कि हमें सभी को हिन्दी में कार्य करने हेतु प्रेरित करना चाहिए तथा हिन्दी में अच्छा कार्य करने हेतु प्रोत्साहन देना चाहिए तथा हिन्दी का विकास सदभावना के उदेश्य से करना चाहिए। उन्होंने पिछली बैठक की समीक्षा करते हुए सभी सदस्य कार्यालयों से अनुरोध किया कि वे राजभाषा की वेबसाइट पर जल्दी से जल्दी पंजीकरण करवायें तथा राजभाषा विभाग को भेजी जाने वाली रिपोर्ट को भी समय पर प्रेषित करें। उन्होंने यूनिकोड एवं विभिन्न हिन्दी सॉफ्टवेयर की जानकारी दी। कार्यक्रम के दौरान विभिन्न कार्यालयों नामतः भाकृअनुप–वि.प.कृ.अनु.सं., अल्मोड़ा, क्षेत्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, रानीखेत, गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालयी पर्यावरण एवं सतत् विकास संस्थान कोसी– कटारमल, अल्मोड़ा, भारतीय स्टेट बैंक, अल्मोड़ा, इन्डियन मेडिसिन्स फॉर्मेस्यूटिकल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, (भारत सरकार का उद्यम) मोहान, जिला अल्मोड़ा, हस्तशिल्प बोर्ड, अल्मोड़ा से आये प्रतिनिधियों ने अपने कार्यालयों में हो रही हिन्दी प्रगति का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुतीकरण द्वारा दिया।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), अल्मोड़ा की 21वीं छमाही बैठक

भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा में दिसम्बर 18, 2023 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), अल्मोड़ा की 21वीं बैठक का आयोजन संस्थान के निदेशक तथा नराकास के अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मी कान्त की अध्यक्षता में किया गया। इस बैठक के मुख्य अतिथि श्री अजय कुमार चौधरी, सहायक निदेशक (कार्यान्वयन) राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, गाजियाबाद रहे। मुख्य अतिथि श्री चौधरी ने सभी विभागों की छमाही रिपोर्ट की समीक्षा करते हुए सम्बन्धित विभागों को उनकी कमियों से अवगत कराया तथा उन्हें राजभाषा नियम का सही से अनुपालन करने हेतु अनुरोध किया। हिन्दी के विभिन्न साफ्टवेयर के बारे में बताते हुए उन्होंने कहा कि आज हिन्दी का प्रयोग हर क्षेत्र में काफी सरल हो गया है। अतः सभी सदस्य कार्यालय राजभाषा के नियमों का अनुपालन सरलता से कर सकते हैं। इस बैठक में अल्मोड़ा नगर के केन्द्रीय सरकार के विभागों, कार्यालयों, उपक्रमों, सशस्त्र बलों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों के अधिकारियों एवं प्रतिनिधियों ने सहभागिता की। डॉ. निर्मल कुमार हेडाऊ, प्रभागाध्यक्ष, फसल सुधार ने सभी प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए उन्हें कार्यक्रम की प्रस्तावना से अवगत कराया। तत्पश्चात सभी सदस्य कार्यालयों के प्रतिनिधियों द्वारा अपना परिचय दिया गया। इसके उपरान्त श्रीमती रेनू सनवाल, मुख्य तकनीकी अधिकारी एवं एवं सदस्य सचिव, नराकास द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पिछली बैठक के बिन्दुओं पर की गई कार्यवाही प्रस्तुत की गयी तथा राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम 2023–24 के बारे में अवगत कराया गया। नराकास के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. लक्ष्मी कान्त ने सभी नराकास के सदस्यों का स्वागत एवं आभार व्यक्त करते हुए कहा कि ये अत्यन्त हर्ष का विषय है कि इस कार्यालय की अध्यक्षता के अन्तर्गत आने वाले सभी सदस्य कार्यालयों का राजभाषा विभाग की बेवसाइट पर पंजीकरण हो चुका है। उन्होंने कहा कि प्रस्तुतीकरण के माध्यम से छमाही रिपोर्ट दर्शाने में उत्तरोत्तर सुधार होता जा रहा है। सभी सदस्य कार्यालयों का आहवाह करते हुए उन्होंने कहा कि आज तकनीकी का युग है। अतः हम राजभाषा की प्रगति हेतु इस तकनीकी क्षेत्रों में भी इसकी प्रगति हेतु प्रयास करें ताकि प्रयास से प्रदर्शन की उत्कृष्टता बढ़े। उन्होंने कहा कि हम भारत सरकार में सेवारत है अतः हमें राजभाषा अधिनियम के अन्तर्गत आने वाली सभी नियमों को अनुपालन करना चाहिए ताकि संसदीय समिति के निरीक्षण के दौरान उन्हें किसी प्रकार कठिनाई ना हो। कार्यक्रम के दौरान विभिन्न

कार्यालयों नामतः भाकृअनुप–वि.प.कृ.अनु.सं., अल्मोड़ा, क्षेत्रीय आयुर्वेद अनुसंधान संस्थान, रानीखेत, गोविन्द बल्लभ पन्त हिमालयी पर्यावरण एवं सतत् विकास संस्थान कोसी– कटारमल, अल्मोड़ा, भारतीय स्टेट बैंक, अल्मोड़ा, इन्डियन मेडिसिन्स फार्मास्युटिकल कारपोरेशन लिमिटेड (भारत सरकार का उद्यम), मोहान, जिला – अल्मोड़ा, यूकों बैंक, अल्मोड़ा, यूनियन बैंक, अल्मोड़ा, पंजाब नेशनल बैंक, अल्मोड़ा, केन्द्रीय विद्यालय, रानीखेत, केन्द्रीय विद्यालय, अल्मोड़ा, भारत संचार निगम, अल्मोड़ा, एस.एस.बी, रानीखेत, राष्ट्रीय सांख्किीय कार्यालय, अल्मोड़ा से आये प्रतिनिधियों ने अपने कार्यालयों में हो रही हिन्दी प्रगति का संक्षिप्त प्रस्तुतीकरण दिया।

हिन्दी पखवाड़ा

सितम्बर 14 से 30, 2023 तक भाकृअनुप – विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा में हिन्दी पखवाड़े का आयोजन किया गया। पखवाड़े के दौरान कई प्रतियोगिताओं यथा, हिन्दी टिप्पण एवं प्रारूप लेखन, निबन्ध लेखन, टंकण, तात्कालिक आशुभाषण आदि का आयोजन किया गया। पखवाड़े का समापन समारोह में अक्टूबर 5, 2023 को आयोजित हिन्दी संगोष्ठी में माननीय अध्यक्ष, असम कृषि आयोग असम सरकार (पूर्व महानिदेशक बोरलॉग इन्सटीट्यूट ऑफ साउथ एशिया, पूर्व निदेशक, भाकृअनुप– भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली एवं भाकृअनुप– विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा) **डॉ. हरि शंकर गुप्त** मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित रहे। कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि प्रो. दिवा भट्ट, पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सोबन सिंह जीना परिसर, अल्मोड़ा; डॉ. जगदीश चन्द्र भट्ट, पूर्व निदेशक, भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, डॉ. एच.सी. भट्टाचार्य, अधिष्ठाता, डैफोडिल कालेज ऑफ हार्टिकल्चर, डीएमईटी, खेतड़ी, असम एवं श्री संजीव देष्टा, किसान, हिमाचल प्रदेश, सदस्य, शोध सलाहकार समिति. रहे। कार्यक्रम का शुभारम्भ परिषद गीत से किया गया। तत्पश्चात संस्थान के निदेशक डॉ. लक्ष्मी कान्त ने सभी अतिथियों का स्वागत करते हुए उन्हें संस्थान में हो रही हिन्दी की प्रगति से अवगत कराया।

इस अवसर पर स्वरचित कविता पाठ प्रतियोगिता का आयोजन भी किया गया। मुख्य अतिथि डा. हरि शंकर गुप्त ने अपने भाषण में संस्थान में हो रही हिन्दी की प्रगति की सराहना की तथा कहा कि हिन्दी एक ऐसी भाषा है, जिसके द्वारा संस्थान, जिसका उद्देश्य पर्वतीय कृषि का उत्थान है, अपनी तकनीकियां को आधारभूत स्तम्भ कृषकों तक पहुँचा सकते हैं। उन्होने वैज्ञानिको का आह्ववाहन किया कि वे अपने शोध को प्रक्षेत्र तक सरल हिन्दी माध्यम से ले जाएं, ताकि कृषक उसका भरपूर लाभ उठा सकें। विशिष्ट अतिथि हिन्दी की प्रकाण्ड विदुषी डॉ. दिवा भट्ट ने हिन्दी की विशेषता व महत्व को बताते हुए कहा कि अब तो तकनीकी शब्दावलियां भी हिन्दी में आने लगी है। ऐसे में हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हम वैज्ञानिक शोध के परिण ामों को प्रस्तुत करने में भी अधिकाधिक हिन्दी का प्रयोग करें। विशिष्ट अतिथि डा. जगदीश चन्द्र भट्ट, जो कि संस्थान के पूर्व निदेशक भी रहे हैं, ने पूर्व में संस्थान में हिन्दी प्रगति व संस्थान में पहली राजभाषा निरीक्षण समिति की जानकारी दी। उन्होंने संस्थान की हिन्दी पत्रिका हरीतिमा के सम्बन्ध में भी बताया। इसके उपरान्त मुख्य अतिथि, विशिष्ट अतिथियों एवं संस्थान के निदेशक द्वारा पखवाड़े के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं में पुरूस्कृत वैज्ञानिकों, अधिकारियों व कार्मिकों को प्रमाण पत्र भेंट किये गये। पुरूस्कार प्राप्त करने वालों में डॉ. बृज मोहन पाण्डे, डॉ. प्रियंका खाती, डॉ. विजय सिंह मीणा, श्री अमित पश्चापुर, डॉ जितेन्द्र कुमार, श्रीमती रेनू सनवाल, ई. डी.सी. मिश्रा, श्री नारायण राम, श्री मनोज भट्ट, श्री चारू चन्द्र जोशी, श्री वरूण सुप्याल, श्री केशव नौटियाल, श्री सुन्दर राम, श्री नन्दन सिंह रजवार, श्री अभिनव सिंह, श्री सचिन कुमार पाण्डे, श्री हरीश चन्द्र पाण्डे, श्री देवेन्द्र कार्की, श्री अजित बिष्ट एवं श्री भगवान बल्लभ तिवारी रहे। इस अवसर पर निर्णायक मंडल के डॉ. एन.के. हेडाऊ, डॉ. कृष्ण कान्त मिश्रा, डॉ. पंकज कुमार मिश्रा, डॉ. कुशाग्रा जोशी तथा प्रतियोगिताओं के पर्यवेक्षक श्री आर.एस. नेगी, श्रीमती रेनू सनवाल, डॉ. जी.एस. बिष्ट, श्री ललित मोहन तिवारी सहित सभी वैज्ञानिक व कार्मिक उपस्थित थे।

'हिन्दी भाषाः वैज्ञानिक उपयोगिता' विषय पर कार्यशाला

मार्च 20, 2024 को भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा में 'हिन्दी भाषाः वैज्ञानिक उपयोगिता' विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि/मुख्य वक्ता के रूप में सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय की एसोसिएट प्रोफेसर डॉ. प्रीति आर्या उपस्थित रहीं। सर्वप्रथम भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा के निदेशक डॉ लक्ष्मी कान्त ने सभी सहभागियों का स्वागत करते हुए उन्हें संस्थान के कार्यों व राजभाषा के महत्व की जानकारी दी। उन्होंने सभी को बताया कि हमारा संस्थान राजभाषा विभाग द्वारा वर्गीकृत क्षेत्रों मे से 'क' क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। उन्होंने सभी से अपील की कि वे वैज्ञानिक अनुसंधान के प्रचार–प्रसार में हिन्दी भाषा का अधिक से अधिक प्रयोग करें। मुख्य वक्ता डॉ प्रीति आर्या ने हिन्दी भाषा की वैज्ञानिक उपयोगिता विषय पर व्याख्यान देते हुए बताया कि हिन्दी भाषा संस्कृत से निकली भाषा है। यह एक विकसित भाषा के रूप में देखी जाती है। विज्ञान को परिभाषित करते हुए उन्होंने कहा कि विज्ञान एक ऐसा ज्ञान है जो हमें अनुसंधान से विशिष्टता की ओर ले जाता है। वर्तमान संदर्भ में उन्होंने त्रिभाषा यानि हिन्दी, अंग्रेजी व क्षेत्रीय भाषा में विज्ञान की दृष्टि से प्रगति की जानकारी दी। उन्होंने कहा कि हिन्दी स्थापित नहीं हो पा रही है क्योंकि हम अंग्रेजी भाषा को प्रोत्साहन दे रहे हैं। उनके शब्दों में भाषा को विज्ञान का पर्याय नहीं माना जाता। उनके अनुसार हमें परिस्थिति अनुसार शब्दों का चयन करना चाहिए तभी हिन्दी व्यवहारिक रूप में आगे आएगी और उसकी वैज्ञानिकता बढ़ेगी। उन्होंने कहा कि हिन्दी को विश्व की तीसरी भाषा के रूप में देखा जा रहा है जो कि एक सुखद अनुभव है। हिन्दी आज प्रयोजन मूलक भाषा यानि कृत्रिम भाषा के रूप में उभरी है। आज चिकित्सा के साथ ही अन्य क्षेत्रों में भी हिन्दी उभर रही है। उनके अनुसार जब तक व्यवहार है, भाषा कभी समाप्त नहीं हो सकती। उन्होंने कहा कि विज्ञान हमारे चिन्तन को विशिष्टता की ओर ले जाता है। गतिशीलता ही मानव जीवन हेतु आवश्यक है और भाषा हमें गतिशीलता की ओर ले जाती है। उनके अनुसार भाषा में बदलाव की आवश्यकता नहीं। हम स्थान विशेषानुसार प्रतिपारिक भाषी शब्दों का चयन कर सकते हैं। उन्होंने बताया कि केन्द्रीय हिन्दी आयोग व राजभाषा विभाग द्वारा शब्दावली बनायी गयी है, जिनमें हम वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले शब्दों को देख सकते हैं और अपने व्यवहार व शोध में उनका प्रयोग कर सकते हैं।

कार्यशाला में भाकृअनुप– विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा के फसल सुधार प्रभाग के प्रभागाध्यक्ष डॉ. निर्मल कुमार हेडाऊ, फसल उत्पादन प्रभाग के प्रभागाध्यक्ष डॉ. बृज मोहन पाण्डे, समस्त वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक व सहायक वर्ग के कर्मचारी उपस्थित थे। कार्यशाला का संचालन भाकृअनुप– विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा की मुख्य तकनीकी अधिकारी व प्रभारी राजभाषा अधिकारी श्रीमती रेनू सनवाल तथा धन्यवाद प्रस्ताव वैज्ञानिक डॉ. प्रियंका खाती द्वारा दिया गया।

अन्य कार्यक्रम

कृषि समृद्धि कार्यक्रम

कृषि समृद्धि एक रेडियो आधारित कार्यक्रम– भाकृअनुप–विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा के मध्य अच्छी कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने के लिए एक पहल है। यह उत्तराखण्ड के पर्वतीय जिलों के किसानो के लिए एक लाइव, 15 मिनट का सिंडिकेटेड वार्ता आधारित रेडियो कार्यक्रम है, जिसमें संस्थान के विशेषज्ञ उन्नत खेती, प्रौद्योगिकी अंगीकरण, सामाजिक, आर्थिक सुधार और विभिन्न कृषि सम्बन्धी जानकारी साझा करते हैं जो प्रत्येक रविवार को सांय 7.10 बजे आकाशवाणी, अल्मोड़ा से प्रसारित किया जाता है।

कृषक हेल्पलाइन सेवा

किसानों की सुविधा के लिए, संस्थान पर्वतीय किसानों द्वारा फसल की किस्मों, बीज उपलब्धता, कीट और रोग प्रबन्धन, योजनाओं आदि जैसे विभिन्न पहलुओं पर उठाए गये प्रश्नों का उत्तर देने के लिए एक निःशुल्क

हेल्पलाइन सेवा प्रदान करता है। किसान कार्य दिवसों में सुबह 9.00 बजे से शाम 5.30 बजे तक 1800–180–2311 डायल करके कृषि विशेषज्ञों से अपने प्रश्नों के समाधान प्राप्त कर सकते हैं।

सूचना एवं संचार तकनीक के माध्यम से कृषि-सलाह

किसानों को आवश्यकता आधारित लघु संदेश सेवा और एम किसान पोर्टल के माध्यम से कृषि परामर्श प्रदान किए जाते हैं। इससे पंजीकृत किसानों को उन्नत किस्मों, फसल सुरक्षा उपायों, पोषक तत्व प्रबन्धन, किसान मेले/प्रक्षेत्र दिवस, बीज उत्पादन, सरकारी योजनाओं के बारे में जानकारी भेजी जाती है।

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म

सोशल मीडिया डिजिटल संचार का सबसे नवीन रूप है। फेसबुक कम समय में और कम संसाधनों के साथ अधिक संख्या में कृषकों/लाभार्थियों तक पहँचने का अनूठा अवसर प्रदान करता है। संस्थान का अपना आधिकारिक फेसबुक पेज https://www.facebook.com/www.vpkas.icar.gov.in है। इसके द्वारा विभिन्न प्रक्षेत्र स्तरीय गतिविधियों, संस्थान द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियों की जानकारी और अन्य सूचनाओं को नियमित रूप से अद्यतन किया जा रहा है।

हिन्दी प्रकाशन

प्रसार प्रपत्र

- उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र में असिंचित धान की वैज्ञानिक खेती
- उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र में जेठी धान की वैज्ञानिक खेती
- उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र में चेती धान की वैज्ञानिक खेती
- उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र में सोयाबीन एवं भट की उन्नत खेती
- पर्वतीय क्षेत्रों मे मसूर की उन्नत खेती
- पर्वतीय क्षेत्रों मे दलहनी मटर की वैज्ञानिक खेती
- कदन्न के हानिकारक कीट एवं उनका प्रबंधन
- फसलों का चूहों से बचाव

पुस्तिका

- प्राकृतिक खेतीः कम लागत खेती एवं स्वस्थ पर्यावरण का सरल विकल्प

अन्य प्रकाशन

- समाचार पत्रिका (द्विभाषी)
- कृषक दिग्दर्शिका 2023–24
- वार्षिक प्रतिवेदन 2020
- वार्षिक प्रतिवेदन 2022

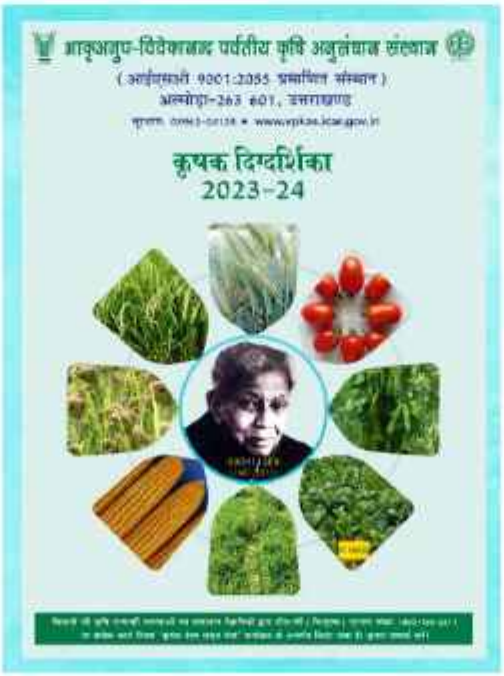

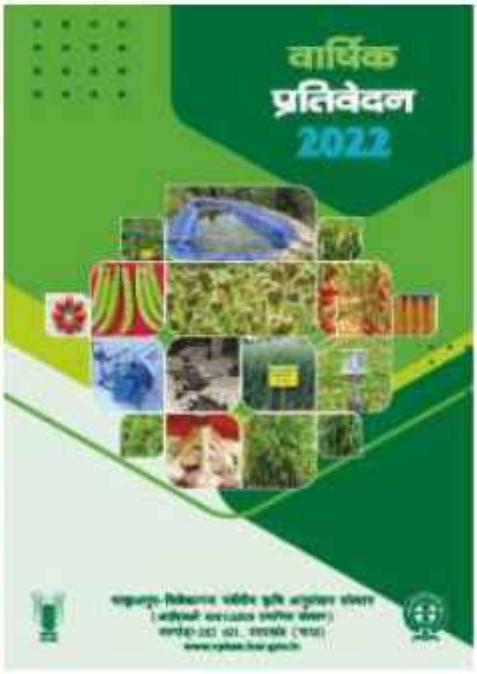

राजभाषा गतिविधियां

संस्थान में नराकास की बैठक

संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति द्वारा संस्थान की राजभाषा प्रगति का निरीक्षण

हिन्दी पखवाड़े के दौरान प्रतियोगिताएं

संस्थान में नराकास की बैठक

संस्थान में हिन्दी संगोष्ठी का आयोजन

हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

कार्यालयी प्रयोग हेतु वाक्यांश

Acknowledge receipt of the letter	पत्र की पावती भेजें
Action may be taken accordingly	तदनुसार कार्रवाई की जाए
Allotment from the quota reserved	आरक्षित कोटे से आवंटन
Analytical estimating	विश्लेषणात्मक आंकलन
Approval may be accorded	अनुमोदन प्रदान कर दिया जाए
Approved draft typed and put up	अनुमोदित प्रारूप टाइप करके प्रस्तुत करें
As amended	यथा संशोधित
As and when	जब कभी
As required under the rules	जैसा कि नियमों के अधीन अपेक्षित है/हो
As the case may be	यथास्थिति, जैसी स्थिति हो, यथा प्रकरण
As verbally instructed	मौखिक अनुदेशानुसार
Attention is invited to	की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है
Call for an explanation	जवाब तलब किया जाए
Checked and found correct	जाँच की और सही पाया
Copy enclosed for ready reference	सुलभ संदर्भ के लिए प्रतिलिपि संलग्न
Deduction at source	स्त्रोत पर कटौती
Delegation of financial powers	वित्तीय शक्तियों का प्रत्यायोजन
Discretionary power	विवेकाधिकार
Duly sanctioned	विधिवत् मंजूर किया हुआ
Ex-post facto sanction	कार्योत्तर मंजूरी, कार्योत्तर संस्वीकृति
For concurrence please	सहमति के लिए
Hold in abeyance	प्रास्थगित रखना
If deemed fit	यदि उचित समझें
In anticipation of your approval	आपके अनुमोदन की प्रत्याशा में
In his discretion	स्वविवेक से, अपनी समझ से
Leave preparatory of retirement	सेवानिवृत्तिपूर्व छुट्टी
Memorandum of understanding	समझौता ज्ञापन
Modus operandi	कार्य प्रणाली
On compassionate grounds	अनुकंपा के आधार पर
Partial modification in the case	इस मामले में आंशिक संशोधन

Please comply before due date	कृपया नियत समय से पहले इसका पालन किया जाए
Please use Hindi in correspondence	कृपया पत्राचार में हिन्दी का प्रयोग करें
Quick disposal of claims	दावे का शीघ्र निपटान
Rendition of reports	रिपोर्ट देना
Service conditions are not satisfactory	सेवा–करार संतोषजनक नहीं है
Status quo	यथापूर्व स्थिति
To the best of knowledge and belief	जहाँ तक पता है और विश्वास है
Under intimation to this office	इस कार्यालय को सूचना देते हुए
Verified and found correct	पड़ताल की और ठीक पाया
Vetting of draft	प्रारूप का पुनरीक्षण

टिप्पणियाँ

टिप्पणियाँ

टिप्पणियाँ

हमारी नागरी लिपि दुनिया की सबसे वैज्ञानिक लिपि है।

- राहुल सांकृत्यायन

राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।

- महात्मा गांधी